चैतन्य लहरी

मई-जून : 2007

चैतन्य लहरी

प्रकाशक
निर्मल ट्रॉंसफोर्मेशन प्रा. लि.
प्लाट नं. 8, चन्द्रगुप्त हाउसिंग सोसाइटी,
पॉड रोड, कोथरुड
पुणे – 411 029
फोनः 020- 25285232

मुद्रक
कृष्णा प्रिन्टर्ज एण्ड डिज़ाइनर्ज
292/23 ओंकार नगर 'बी'
त्रीनगर, दिल्ली-110035
मोबाइल : 9212238008

आप अपने सुझाव, सदस्यता एवं जानकारी के लिए निम्न पते पर लिखें :
निर्मल ट्रॉंसफोर्मेशन प्रा. लि.
प्लाट नं. 8, चन्द्रगुप्त हाउसिंग सोसाइटी,
पॉड रोड, कोथरुड
पुणे – 411 029
फोनः 020- 25285232

अपने अनुभव, सहज सम्बन्धी लेख आदि निम्नलिखित पते पर भेजें :
श्री ओ.पी. चान्दना
जी-11-(463), ऋषि नगर, सानी बाग
दिल्ली-110034
फोन : 011- 65356811

चैतन्य लहरी

अंक : 5 - 6 , 2007

इस अंक में

1 शिव पूजा एवं जन्मदिवस पूजा सेमिनार – पुणे (18-21 मार्च 2007)

3 उत्क्रान्ति पथ

4 नवरात्रि पूजा, लॉस एंजलिस, अक्टूबर 2006

5 मास्को में डॉ. बोडन का एक उत्कृष्ट संस्मरण अगस्त 1991

8 श्री कृष्ण पूजा, गारलेट- मिलान आश्रम - 6-8-1988

16 हँसा चक्र पूजा, Green Ashachu, जर्मनी - 10-7-88

26 बोर्डी पूजा, बोर्डी 12-2-1984

27 सहजयोग और शारीरिक चिकित्सा -2

29 आत्मा, निर्मला योग - 1983 से उद्घृत

32 परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी का परामर्श, हैम्पस्टैड टाऊन हॉल (इंग्लैण्ड) 31.03.83

37 सहजी माताओं को श्री माताजी का परामर्श

40 निर्मल नगरी-पुणे की पावन भूमि पर श्री महालक्ष्मी का पुनर्आगमन - 22-10-2006

43 अतिविशिष्ट व्यक्ति सम्मेलन -16-6-1999

चार दिवसीय सहजयोग सेमिनार

निर्मल नगरी पुणे

18-21 मार्च 2007

18 मार्च को आरम्भ होकर 21 मार्च को सम्पन्न होने वाले अन्तर्राष्ट्रीय सहजयोग सेमिनार की मेज़बानी टर्की, दुबई, इज़राइल, ट्यूनीशिया, यूनान, मोरक्को, ईरान तथा भारत ने मिलकर की। इस पावन स्थल पर शिव पूजा और परम पूज्य श्रीमाताजी की जन्म दिवस पूजा में भाग लेने के लिए आए 8 से 9 हजार सहजयोगियों का सामूहिक तारतम्य तथा वहाँ मंचन किए गए अद्वितीय सांस्कृतिक कार्यक्रम देखते ही बनते थे।

भारत वर्ष में पहली बार इतनी बड़ी संख्या में (1000-1400) विदेशी सहजयोगी भाई बहन परमपावनी श्रीमाताजी को 84वीं जन्म दिवस पूजा तथा शिव पूजा के अवसर पर उनके श्री चरणों में अपने हृदयार्पण के लिए उपस्थित हुए थे। संगीत कार्यक्रमों ने दोनों पूजाओं को अत्यन्त उल्लासमय बना दिया। पुणे के सहजयोगियों द्वारा किए गए ''अपने-अपने देशों में सहजयोग प्रचार-प्रसार के अनुभव'' विषय पर अत्यन्त सशक्त सत्र हुआ। इसमें टर्की, इज़राइल, ईरान, मोरक्को और दुबई के संयोजकों ने अपने-अपने अनुभव बताए। भारत के नगर सहजयोग संयोजकों ने भी इसमें अपने अनुभव सुनाए। पेश किए गए शास्त्रीय कार्यक्रमों में उच्च कोटि की कला एवं सहजयोगसंस्कृति को प्रदर्शित किया गया। विश्व निर्मल प्रेम आश्रम (N.G.O.) से आए नन्हें बच्चों ने देवी की स्तुति करते हुए नृत्य एवं भजन पेश किए। पण्डित अरुण आप्टे, सुरेखा आप्टे, पण्डित सुब्रामण्यम तथा अन्य सहजयोगी गायकों का संगीत अत्यन्त जीवन्त और आनन्दमय था। आस्ट्रेलिया के सहजयोगियों ने भी बहुत सुन्दर भजन गाए। परन्तु ईरान के सहजयोगी अपने स्थानीय वाद्ययन्त्रों के साथ जब भजन गाने लगे तो स्वर्गीय दृश्य था। उपस्थित सभी सहजयोगी अपने-अपने स्थानों पर खड़े होकर आनन्दनृत्य कर रहे थे। ऐसा लगता था मानों असंख्य कुण्डलिनियाँ नृत्य कर रही हों! आस्ट्रेलिया की नन्हीं सत्यभामा कल्पा ने अद्वितीय कुचिपुड़ी नृत्य पेश किया तथा नन्हीं बालिकाओं के एक अन्य समूह ने भरतनाट्यम पेश किया।

श्री शिव पूजा 19 **मार्च** 2007- 19 मार्च का दिन तीन कारणों से महत्वपूर्ण था। सर्वप्रथम तो इस दिन अद्वितीय सूर्यग्रहण था जो पूरे भारत वर्ष में दिखाई दिया। दूसरे श्रीराम जन्मदिवस समारोह का यह प्रथम नवरात्र था और तीसरे महाराष्ट्र का लोकप्रिय गुडीपडवा दिवस था- विक्रमीसम्वत जिसे पूरा भारतवर्ष नववर्ष के रूप में जानता है। इस शुभ दिन हमारी परमपावनी श्रीमाता जी की शिव रूप में पूजा की गई।

गुफा के आकार में बनाए गए मंच पर बने शिवलिंग मंच को कैलाश पर्वत पर श्री शिव का निवास दर्शा रहे थे। लगभग आठ बजे सायं निर्मल नगरी में परम पूज्य श्रीमाताजी के पावन दर्शन हुए। *''विनती सुनिए आदिशक्ति''* प्रार्थना भजन के साथ नन्हें गणेश श्रीगणेश के रूप में श्रीमाताजी के चरणों में पुष्प अर्पण करने के लिए दौड़ते हुए दिखाई दिए।

तत्पश्चात् देवी पूजा की गई। ''तेरे ही गुण गाते हैं, मनोबुद्धिहंकार, आया माता का पूजन दिन आया'' भजनों के साथ देवी का शृंगार किया गया। ''बोलो शिव-शिव शम्भू'' भजन के साथ देवी पूजा सम्पन्न हुई।

तत्पश्चात् श्रीमाताजी की श्री शिव के रूप

में पूजा आरम्भ हुई। गेरु तथा सुरभित पाउडर श्रीमाताजी के मुखारबिन्द पर लगाए गए। लगभग नौ बजे सायं पूरी सामूहिकता ने श्रीमाताजी के श्वेत वस्त्रों में श्री शिव रूप में दर्शन किए। सर्वत्र शान्ति एवं प्रेम का साम्राज्य था। अन्तर्परिवर्तन की शान्ति को सभी हृदय सामूहिक रूप से महसूस कर रहे थे- मानो कह रहे हों **'शिवोहं, शिवोहं'**। अनुग्रह की भावना से सभी हृदय श्री शिव के चरणों में नतमस्तक थे। विश्ववन्दिता गाया गया, आरती हुई और उसके बाद तीन महामन्त्रों का उच्चारण हुआ। प्रसाद को चैतन्यित करते हुए श्रीमाताजी की सक्रियता हमें पूर्व वर्षों की याद दिला रही थी। ग्यारह साड़ियों का अन्तर्राष्ट्रीय उपहार श्रीचरणों में भेंट किया गया, सम्भवत: एकादशरुद्र की ग्यारह शक्तियों के प्रतीक के रूप में।

पूजा समापन होने पर हमारे प्रिय पापाजी ने सहज सामूहिकता को सम्बोधित करते हुए पिछले 37 वर्षों में श्रीमाताजी द्वारा किए गए अथक परिश्रम एवं प्रयासों की याद दिलाई। उन्होंने कहा कि श्रीमाताजी ने सभी राष्ट्रों, धर्मों, भाषाओं तथा जातियों के लोगों को समान रूप से प्रेम प्रदान किया है। तथा अब समय आ गया है कि श्रीमाताजी के पावन प्रेम और उनके द्वारा किए गए कठोर परिश्रम के लिए उनके प्रति हम अपनी कृतज्ञता प्रकट करें। ऐसा हम केवल तभी कर सकते हैं जब हम सब उनके प्रेम संदेश (सहजयोग सन्देश) को जन-जन तक पहुँचाने की जिम्मेदारी अपने कन्धों पर ले लें।

जन्म दिवस पूजा 21 मार्च 2007

21 मार्च का दिन यद्यपि काफी गर्म था परन्तु सन्ध्या अत्यन्त शीतल एवं सुखकर थी। पूजा के लिए लालायित 9000 सहजयोगी उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहे थे। पूजा मंच को महल की तरह से सजाया गया। स्थान-स्थान पर सुरभित पुष्प तथा रंग-बिरंगे गुब्बारे लगे हुए थे।

सायं सात बजे सामूहिक बन्धन और महामन्त्रों के साथ शुभारम्भ किया गया। सुरेखा आप्टे ने 'तुम आशा विश्वास हमारे' भजन गाया।

निर्मल नगरी में श्रीमाताजी के प्रवेश के समाचार ने निरभ्र आकाश को आतिशबाजी की चमक से भर दिया। भजन गाते हुए पूरी सामूहिकता परम पावनी माँ के स्वागत के लिए खड़ी हो गई। सभी लोग गा रहे थे, 'श्री जगदम्बे आई रे'।

मंच के पर्दे हटे, परम पावनी माँ ने अपने पावनदर्शन सभी को दिए और अगले ही क्षण श्रीगणेशअथर्वशीर्षम पढ़ा जाने लगा। नन्हें बच्चे श्रीमाताजी के चरण कमलों की पूजा करने के लिए दौड़ पड़े। वे अत्यन्त ध्यान से नन्हें गणेशों को निहार रही थीं। 'जागो सवेरा आया, तथा 'छिन्दवाड़ा में जन्म हुआ' के साथ श्रीमाताजी का शृंगार हुआ।

पौने नौ बजे चरण कमलों की आरती की गई और बाद में उत्सुक सामूहिकता ने श्रीमाताजी और सर सी.पी. को जन्मदिवस केक काटते हुए देखा। पूरे वातावरण में आनन्द का साम्राज्य फैल गया, आतिशबाजियाँ जलाई जा रही थीं, आकाश में गुब्बारे उड़ाए जा रहे थे। पूर्ण सामूहिकता परम पूज्य श्रीमाताजी के साक्षात् में आनन्दमग्न थी। पुन: 'जन्मदिन आयो' गाया गया।

श्री राजेश शाह ने परम पूज्य श्रीमाताजी के जन्मदिवस के उपलक्ष्य में विश्व की जानी मानी हस्तियों द्वारा भेजे गए बधाई सन्देश पढ़ कर सुनाए। भारत के माननीय राष्ट्रपति तथा टर्की, टेक्सास और ओकलाहोमा तथा पृथ्वी के भिन्न देशों से श्रीमाताजी को मंगल कामनाएं भेजी गई थीं। मंगल संदेश भेजने वाले लोगों में गवर्नर, मेयर्स तथा अन्य विभूतियाँ थीं जिन्होंने श्रीमाताजी के कार्यों की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

तत्पश्चात् सर सी.पी. से सामूहिकता को सम्बोधित करने का अनुरोध किया गया और अत्यन्त विनम्रतापूर्वक उन्होंने परम पावनी श्रीमाताजी का सन्देश सुनाया। सर सी.पी. ने "जय श्रीमाताजी"

(शेष पृष्ठ 7 पर)

आपका हर कार्य मुझे प्रसन्न करने के लिए होना चाहिए। ये एक तरीका है। हर कार्य मुझे प्रसन्न करने के लिए होना चाहिए। ये एक चिन्ह है।

तो हम इस कार्य को कैसे करें? मुझे अपने हृदय में स्थापित करें। अपने हृदय में मुझे स्थापित करने का प्रयत्न मात्र करें। ऐसा करना बहुत सहज है। अब मैं आपके सम्मुख हूँ, मानव रूप में (साक्षात)।

आज ही मैं अपने एक सम्बन्धी को आत्म-साक्षात्कार देने का प्रयत्न कर रही थी और मैंने उससे कहा, "आप अपनी आँखें बन्द मत करें।"

उसने कहा, "नहीं मैं आपके चेहरे को नहीं देखूँगा क्योंकि जब भी मैं आपका चेहरा देखता हूँ तो मुझे लगता है आप मेरी आन्टी हैं। मैं केवल आपके चरणकमलों को देख रहा हूँ ताकि मुझे ये न लगे कि आप मेरी आन्टी हैं। आप अत्यन्त महान हैं और आपका मुख मुझे भ्रम में डाल देता है।"

वह ये बात देख पाया कि ये महामाया हैं। कहने लगा, "केवल आपके चरण कमलों पर ही मैं उन्नत होता हूँ और आपके चरणकमलों के माध्यम से ही भावनाओं की इस बाधा को पार कर सकता हूँ।"

इसी प्रकार से, 'मैं जानती हूँ कि मैं महामाया हूँ। मैं जानती हूँ कि मैं हूँ।' मुझे बनना पड़ा। परन्तु आपको मेरे चरण अपने हृदय में स्थापित करने पड़ेंगे। केवल चरण अपने हृदय में स्थापित करने पड़ेंगे क्योंकि मेरा चित्र तो लुप्त हो जाता है। हर चीज़ भ्रम हो सकती है। हो सकता है कि मेरी मुखाकृति देखने से आप अपने बन्धनों की दीवारों को पार न कर पाएं।

ये कहना, "मैं अवश्य श्रीमाताजी से मिलूंगा, अवश्य मुझे ऐसा करना है, श्रीमाताजी को अवश्य मेरे घर आना चाहिए, अवश्य उन्हें मेरे घर पर आना चाहिए:- ये सब बातें मूर्खता हैं। मैं नहीं समझ पाती कि लोगों को क्या समस्या है!"

"श्रीमाताजी कृपा करके मेरे हृदय में आइए। मेरा हृदय स्वच्छ कीजिए ताकि आप वहाँ रह सकें। अपने चरण कमल मेरे हृदय में स्थापित कीजिए। मेरे हृदय में अपने चरण कमलों की पूजा होने दीजिए। मुझे भ्रान्तियों से बचाइए, भ्रमों से दूर ले जाइए। मुझे सत्य में स्थापित कीजिए। उथलेपन की चमक दमक दूर कीजिए। अपने हृदय में मैं आपके चरणकमलों का आनन्द ले सकूं। आपके चरण कमल मैं अपने हृदय में देख सकूं।"

केवल ऐसे लोग- ब्रह्मा, विष्णु और महेश ने भी ऐसा ही किया। ये न समझें कि केवल आपको ही ऐसा करना पड़ रहा है।

अतः विनम्र बनें। अपने हृदय में विनम्रता लाएं, हृदय में विनम्रता लाएं, अपनी विनम्रता का आनन्द लें, अपने सद्गुणों का आनन्द उठाएं। विनम्रता किसी भी सहजयोगी का सबसे बड़ा सद्गुण होता है।

अपने को विश्वस्त करने के लिए आपने बहुत सी चीजें देखी हैं परन्तु यह किसी भी प्रकार का समर्पण नहीं है क्योंकि आप मुझे क्या समर्पित कर सकते हैं? इस विषय में सोचें। हर समर्पण जब आशीर्वाद है तो आप क्या समर्पण कर रहे हैं?

हृदय की हर भावना आशीर्वाद है। अभी आप इसे महसूस करें और अपने हृदय में आपको आनन्द की अनुभूति होगी। तो आपका समर्पण क्या है और किस विषय में है? उन लोगों की बात तो मैं समझ सकती हूँ जो नए-नए आए हैं या बेकार हैं। परन्तु आप तो परिधि रेखा पर नहीं हैं। परन्तु कुछ लोग एक दम से परिधि रेखा पर चले जाते हैं। आप उन्हें कोई कार्य दीजिए। बस समाप्त। मैं यदि किसी के प्रति मधुर हो जाऊं - समाप्त। मैं यदि किसी से मिल लूँ - समाप्त। कहने का अभिप्राय ये है कि ये, अतिशयता है। मैं तो आपके प्रति सहृद भी नहीं हो सकती।

आप यदि कोई गलती करते हैं, ठीक है, फिर आप उसे महसूस करते हैं और आपकी बाईं विशुद्धि पकड़ जाती है, गलती तो आपने कर ली है, "हो गया, समाप्त।" आप मुझे प्रेम करते हैं, हो सकता है प्रेम में

कोई गलती हो या कुछ हो गया हो। कोई बात नहीं।

"अब मैं सावधान रहूँगा, अब मैं गलतियाँ नहीं करूंगा, किस प्रकार मैं गलतियाँ कर सकता हूँ? क्योंकि मेरा प्रेम अधूरा था। मैं यदि वास्तव में प्रेम करता तो मुझसे ऐसी गलती न होती।"

ठीक है, अपना प्रेम विकसित करें। परन्तु नहीं, आप तो कहेंगे, "मैं दोषी हूँ, क्योंकि मैंने ऐसा किया है, तो आप ये भी खो देते हैं और वो भी और इस प्रकार आपकी गलती एक बार फिर बाधा बन जाती है।

इसके विषय में स्वयं को दोषी न मानें। हमें आगे उन्नत होना है। भूत को भूल जाएं, भूल जाएं, भूल जाएं, आपको आगे बढ़ना है। आपको गहन होना है। बातचीत करते हुए हमें उस गरिमा की, उस परमेश्वरी भय की बात करनी है।

ऐसा करना बहुत महत्वपूर्ण है। और एक बार जब आपके अन्दर परमेश्वरी भय (श्रद्धा) विकसित हो जाएगा तो आपके ऊपर एकादशरुद्र का प्रकोप समाप्त हो जाएगा। उस परमेश्वरी भय (Awe) के विषय में सोचें। विज्ञान, उसके आनन्द और परमेश्वरी श्रद्धा के आनन्द को देखें। यह अत्यन्त–गहन है, सागर की तरह गहरा। उथले स्तर पर सागर अत्यन्त उग्र होता है। परन्तु गहरे स्तर पर यह पूर्णतः शान्त होता है।

उस गहनता को महसूस करें। श्रद्धा (Awe) के बिना आप गहनता में नहीं उतर सकते।

(इन्टरनैट विवरण)
रूपान्तरित

नवरात्रि पूजा

लॉस एंजलिस, अक्टूबर 2006 (रिपोर्ट)

पिछले लगभग दो सप्ताहों से यहाँ पर प्रतिदिन नवरात्रि के उपलक्ष्य में श्रीमाताजी की संक्षिप्त पूजाएं की जा रहीं थीं, जिनमें श्री माताजी को ओटी अर्पण की जाती थी और कभी–कभी भजन भी गाए जाते थे। पूजा संक्षिप्त होने के कारण सभी लोग इनमें भाग न ले पाते थे परन्तु कुछ सहजयोगी जिन्हें इनमें सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, उन्होंने इस प्रकार बताया: नवरात्रि के छठे दिन डेढ़ बजे रात्रि (Morning) माँ स्वयं बार–बार कह रही थीं, "मैं देवी हूँ, मैं देवी हूँ।" जो महिलाएँ उन्हें ओटी अर्पण करने के लिए गईं, वे श्रीमाताजी को केवल इतना ही कह पाईं, "श्रीमाताजी आप ही देवी हैं, आप महादेवी हैं, कृपा करके हमारी रक्षा कीजिए।" श्रीमाताजी के मुख से इन शब्दों को सुनकर सभी लोग आश्चर्य चकित थे! कमरे में मौजूद लोगों ने इन शब्दों की शक्ति को महसूस किया। नवरात्रि के दसवें दिन, दशहरे के दिन, कुछ योगियों को श्रीमाताजी के घर पर भजन पेश करने के लिए कहा गया। मेरे पिताजी भी उनमें से एक थे। उन्होंने मुझे कुछ आश्चर्यजनक कहानियाँ सुनाईं। गाँधीजी के जन्मदिवस पर श्रीमाताजी के सम्मुख भारत का राष्ट्रीयगान गाया गया और इसके बाद देवी के श्री चरणों में कुछ भजन अर्पित किए गए। "माँ तेरी जय हो" भजन को स्वयं श्रीमाताजी ने अपने मुखारबिन्द से गाया। साधना दीदी की आँखों से आँसू झर रहे थे और अविश्वास के कारण सभी लोगों के मुँह खुले हुए थे। मुझे बताया गया कि जब श्री माताजी गा रही थीं तो कक्ष में चैतन्य लहरियाँ विद्युत–तरंगों की तरह से प्रवाहित हो रही थीं तथा सभी लोग श्रीमाताजी से प्रवाहित होती हुई शक्ति को महसूस कर सके। यह अत्यन्त आनन्ददायी समाचार था, इसकी केवल कल्पना कर सकता हूँ कि इस क्षण का साक्षी होना कैसा होता! न जाने इसकी आडियो/वीडियो रिकार्डिंग भी की गई है या नहीं।

प्रेमपूर्वक Sulu
युवा शक्ति
इन्टरनैट विवरण (रूपान्तरित)

मास्को में डॉ. बोडन का एक उत्कृष्ट संस्मरण

(अगस्त1991 में मास्को विप्लव की सन्ध्या, सार्वजनिक कार्यक्रम के पश्चात् विक्टर बेजेका के निवास पर रात्रिभोज वार्ता में लिपिबद्ध)

'उस सन्ध्या पूरे मास्को में केवल श्रीमाताजी ही कार्यक्रम कर पाईं क्योंकि सेना खेलसभागार का हॉल हमने आरक्षित (Book) करवा लिया था। उस दिन वहाँ पर होने वाले अन्य सभी कार्यक्रम रद्द कर दिए गए थे, परन्तु पहले से ही हमें चेतावनी दे दी गई थी कि दस बजे कर्फ्यू लग जाएगा। हमेशा की तरह श्रीमाताजी ने अत्यन्त सुन्दर कार्यक्रम किया। मैं कहूँगा कि लगभग चार हजार लोग थे। कार्यक्रम के बाद में सभी ने श्रीमाताजी को घेर लिया, कुछ तो अश्रुपूर्ण आँखों के साथ श्रीमाताजी की ओर जा रहे थे। और माँ तो बस माँ हैं निरन्तर प्रेम विकीर्णित करती हुईं माँ। ये लोग धीरे–धीरे माँ को पीछे की ओर धकेल रहे हैं क्योंकि ये माँ को छूना चाहते हैं, उनके समीप आना चाहते हैं। तो धीरे–धीरे वे पीछे हट रही हैं, और मैंने सोचा, 'हे परमात्मा लगभग दस बज गए हैं, दस बजने में पाँच मिनट बाकी हैं और अभी हमें मास्को के मध्य से गुज़रना है, जहाँ कर्फ्यू तथा मार्शल लॉ लगा हुआ है। मैं चालक था, हमारे पास श्रीमाताजी की मॉस्कविच (Moscvitch) कार थी। पटरी पर, गटर पर चढ़ाकर पैदल चलने वाले रास्ते पर मैंने गाड़ी को लम्बा खड़ा कर दिया। ज्योंही श्रीमाताजी पीछे की ओर गईं तो मैंने कार का पीछे का दरवाजा खोल दिया। श्रीमाताजी जब एक मीटर दूर थीं तो मैंने कहा, 'श्रीमाताजी आपकी कार।

उन्होंने चारों ओर देखा, आह, बहुत अच्छा और कार में बैठ गईं। मैंने दरवाजा बन्द किया। और हम तेजी से चल पड़े क्योंकि हमें कर्फ्यू से पहले पहुँचना था। हम लेनिनग्रेडस्क्या (Leningradskaya) स्टेट से निकल रहे थे, सड़क पर पूरी तरह अंधेरा था क्योंकि बत्तियाँ बुझा दी गई थीं। अचानक मुझे 'टक–टक–टक–टक की आवाज़ सुनाई दी। हे परमात्मा, ये तो टायर में से हवा निकल गई है।' हम रुके। इससे पूर्व कभी मैंने मॉस्कविच कार का टायर नहीं बदला था, पहली बार मुझे ये कार्य करना था।(हँसी) योगी महाजन भी कार में श्रीमाताजी के साथ पिछली सीट पर बैठे हुए थे। श्रीमाताजी पीछे की सीट पर दाईं ओर बैठी हुई थीं। इसी सीट के नीचे का टायर पंक्चर हुआ था। मैंने कार का जैक निकाला, इसका पम्प चलाकर पहिए को निकाला, दूसरा टायर लिया और इसे लगाने का प्रयत्न करने लगा। परन्तु ये लग नहीं रहा था। मैं स्वयं से कहता हूँ, 'बोडन देखो, चार बोल्ट हैं और चार सुराख हैं' परन्तु फिर भी पहिया लग नहीं रहा! मुझे पसीने आने लगे। कार से बाहर आकर जब योगी महाजन ने अपनी कमीज के बाजू ऊपर चढ़ाने शुरु किए तो मैं समझ गया कि स्थिति गम्भीर है। मैं जानता था कि हम कठिनाई में हैं, काश कि यह व्यक्ति सहायता के लिए आ जाए.....(हँसी)!

तब मैंने कहा, 'ठीक है।' मैं माँ की ओर देखने लगा, उनकी तरफ की खिड़की थोड़ी सी खुली हुई थी। मेरा नाक खिड़की तक जाता है, 'श्रीमाताजी क्या आप ठीक हैं' और उसी क्षण लगभग साठ टी. 82 टैंक, युद्ध के बड़े–बड़े टैंक, दक्षिण की ओर से लेनिनग्रेडस्काया मार्ग में आए। ये टैंक मध्य खेलपरिसर वाले पड़ाव पर जा रहे थे। इस परिसर पर सेना का अधिकार था।

मैं इन टैंकों तथा क्लासिक सिग्नेचर, चर्म हैट पहने रेडआर्मी टैंक कमाण्डरों को देखता हूँ। हर टैंक कमाण्डर का रंग पीला पड़ा हुआ है, परन्तु वह दृढ़ है, सीधा आगे की ओर देख रहा है, स्पष्ट रूप से परेशान है क्योंकि उन्हें अपने ही लोगों पर गोले दागने की सम्भावना का सामना करना पड़ रहा है। परन्तु मुझे वे अत्यन्त युवा, पर अत्यन्त पीले दिखाई दिए। मैंने कहा ये बच्चे हैं, ये लोग क्या कर रहे हैं? बच्चों को युद्ध में झोंक रहे हैं? मैंने वास्तव में यही महसूस किया। मैंने कहा, क्यों नहीं ये वृद्ध लोग...?''

ये मेरी भावना थी, परन्तु तब मैंने सोचा 'निःसन्देह, बोडन 18-19 साल के लड़के हमेशा युद्ध में जाते रहे हैं, परन्तु वे बच्चे हैं। 18 या 19 वर्ष, मैं उन्हें बच्चे ही मानता था। और यही मौत के मुँह में जाते हैं तथा पूरे राजनीतिज्ञ अपने कैबिनेटों

(दफ्तरों) में बैठकर वोडका, और यदि वे अंग्रेज हैं तो शैरी या पोर्ट पीते हैं। तो ये मेरा पहला विचार था।'

तब मैंने श्रीमाताजी से कहा, श्रीमाताजी क्या आप ठीक हैं? उन्होंने अपने छोटे–छोटे चश्में पहन लिए थे, वे बोलीं, 'हाँ, मैं उनका अध्ययन कर रही हूँ,' तब साठ टैंक दहाड़ते हुए आगे बढ़ रहे थे। बाद में हमें पता चला कि ये साठ टैंक विपल्व की सहायता करने के लिए थे, परन्तु सेना के कमाण्डरों ने इन टैंको को न भेजने का निर्णय लिया, ये शान्त खड़े होकर प्रतीक्षा करते रहे, ऐसा प्रतीत हुआ मानो वास्तव में ये गोर्बाचोफ के लिए हों। इसीलिए हमारा ये टायर पंक्चर हुआ था ताकि श्रीमाताजी इन टैंकों का अध्ययन कर सकें। मैं सोचता हूँ कि इन टैंकों को यदि मास्को के भिन्न क्षेत्रों में तैनात किया गया होता तो इन्होंने विपल्व की सफलता में सहायता की होती। तो इन्हें छोड़ दिया गया, श्रीमाताजी की पावन दृष्टि, उनके पावन चित्त से ये निष्प्रभावित हो गए थे।

जो भी हो, तब मैंने महसूस किया कि श्रीमाताजी रूस की रक्षा कर रही हैं और मैं टायर की रक्षा कर रहा हूँ, हम सब अपने–अपने कार्य पर थे। हर आदमी अपने कार्य पर था। तो मैं कार का पहिया लगा रहा था। मैंने सोचा कि कहीं चौरस सुराख में गोल बोल्ट तो नहीं डाल रहा हूँ, परन्तु इन दोनों का आकार गोल था–सुराख और बोल्ट का। समझ पाना मेरे लिए असम्भव था, मैं पगला रहा था। योगी महाजन मेरी सहायता के लिए आये, उन्होंने दो छोटी गाइड पिनें देखीं जिन्हें मैं न देख पाया था। इन पिनों से पहिया चारों बोल्टों पर ठीक प्रकार से लग गया। बाद में मुझे पता चला कि विश्वयुद्ध के पश्चात 1947-48 में अंग्रेजी कारों में ऐसी ही प्रणाली थी। तो अन्ततः मैं जान गया कि क्या बात थी। योगी ने जब ये बताया तो लगभग खड़े हो कर मैंने उन्हें चूम लिया। वे सफलता की चाबी थे। तो मैंने पहिया लगाया और हम चल पड़े। मैंने सूट पहना हुआ था। पुनः अपनी जैकेट पहनी, मेरे बाजू काले हो गए थे और कोहनियों तक ग्रीज़ से सने हुए थे। ये अगस्त का महीना था।

तो लेनिनग्रेडस्क्या मार्ग पर हम मध्य–मास्को की ओर जा रहे थे, अभी गोर्की मार्ग न आया था। अचानक दूरी पर हमें अस्थाई बैरिकों में सैनिक दिखाई दिए। मैं कह उठा 'ओह, ये हमें नहीं निकलने देंगे। और हमें तो दक्षिण में रास्त्रगोएवा (Rastergoeva) जाना था, और श्रीमाताजी ने बड़ी धीमी, सहमी सी आवाज में कहा, 'बोडन, हम ठीक तो रहेंगे न ? श्रीमाताजी जिन्होंने उस क्षण मेरा मध्य–हृदय–चक्र खोला था, मैं उन्हीं को बड़े जोर से पुनः विश्वस्त करने के लिए लगभग कह उठा 'निःसन्देह, श्रीमाताजी।' मैंने सोचा :–

'हे, क्षणभर रुको, यहाँ पर आदिशक्ति बैठी हैं, उन्हीं ने मुझे यह विशाल हृदय प्रदान किया है, उसमें बिल्कुल भय नहीं है, आदि आदि। अब वे मुझे किस माया में डाल रही हैं? अपने हृदय में मैंने कहा, 'माँ मुझे खेद (Sorry) है, आप ही तो. ...हैं'।

और जोर से मैं बोला, 'जी, श्रीमाताजी मैं सोचता हूँ कि हमें कुछ नहीं होगा।' परन्तु, आप जानते हैं, वे तो लीला कर रही थीं, खेल कर रहीं थीं। वास्तव में वे लीला कर रही थीं! वे पुनः बोलीं, 'बोडन' बहुत ही धीमी आवाज में, 'बायें मुड़ो।' मेरी पहली प्रतिक्रिया ये थी कि 'श्रीमाताजी नहीं जानतीं।' और तब, 'बोडन, क्या तुम पागल हो? क्या विचार आ रहा है कि श्रीमाताजी नहीं जानतीं! तुम बिल्कुल शान्त रहो। क्षणभर में यह सब हो गया, एक दम से विचार निष्प्रभावित हो गया। मैंने कहा, "जी, श्रीमाताजी।' और बायें, मुड़ गया। तब श्री माताजी ने कहा, 'यहाँ से दायें मुड़ो,' और मैं दायें मुड़

गया। यहाँ अंधेरा था। हम वास्तव में, मैं सोचता हूँ, किसी एक–ओर (One-way) मार्ग पर गलत तरफ़ से चले गए थे। मैंने न तो कुछ पूछा और न कुछ देखा, एक–ओर–मार्ग पर चलता गया। हम घरों, गुम्बदों के बीच आ गए थे (रूसी लोग बड़े–बड़े भवन समूहों के फ्लैटों में खास ही प्रकार से रहते हैं। ये भवन समूह सड़क से हट कर घास और गंदगी में बने होते हैं) हम न जानते थे कि खड्डे में गिरेंगे, किसी दीवार या चट्टान से टकराएंगे! मैं चले जा रहा था! माँ कह रहीं थीं–'बायें चलो, दायें चलो,' और हम दक्षिण की ओर बहने वाली नदी के दूसरी ओर वारस्वस्का एक्सप्रैस मार्ग पर पहुँच गए! मैं नहीं जानता कैसे, क्योंकि नगर का मध्य तो पूरी तरह से बन्द था!"

आश्चर्यचकित ऐलन कह उठे, "कल्पना करें, ऐसा लगता है मानो आप कोई उपन्यास पढ़ रहे हों, या स्वप्न देख रहें हैं। जिसमें रूस की रक्षा करने के लिए परमात्मा को छोटी सी वृद्ध महिला के रूप में मॉस्कविच (Moscvitch) कार में बिठा कर मॉस्को के मध्य से ले जाया जा रहा है। व्यक्ति सोच भी नहीं सकता कि ऐसा होना सम्भव है!"

बोडन बोले, "यह एक अति अद्भुत अनुभव था।"

इन्टरनैट विवरण
(रूपान्तरित)
(From Alan Wherry < shivalan@gmail.com >August 10, 2005)

(पृष्ठ 2 का शेष भाग)

कहकर भाषण शुरु किया। उन्होंने कहा कि हम सभी लोग मिलकर प्रार्थना करें कि आज तो हम सब श्रीमाताजी के सम्मुख बैठकर उनका जन्मदिवस मना रहे हैं परन्तु भविष्य में हमारे बच्चों और नाती पोतों के सम्मुख भी अपने जन्मदिवस के अवसर पर श्रीमाताजी साक्षात् विराजमान हों। सभी उपस्थित लोगों ने प्रार्थना की ..... "श्रीमाताजी जब तक विश्व का हर मानव परिवर्तित नहीं हो जाता कृपा करके तब तक पृथ्वी पर अपने साकार रूप को विराजमान रखें" श्रीमाताजी की ओर से सर सी.पी. ने सभी सहजयोगियों से अनुरोध किया कि सहजयोग प्रचार-प्रसार कार्य की जिम्मेदारी अब वे अपने कन्धों पर ले लें और श्रीमाताजी के निश्छल पावन प्रेम को जन-जन में बाँटें। उन्होंने सभी से अनुरोध किया कि अब आप सहजयोग प्रचार-प्रसार करें और अपनी माँ को आराम करने दें।

"यद्यपि श्रीमाताजी मुख से कुछ नहीं बोले परन्तु चैतन्य-लहरियों के माध्यम से उनकी वैखरी (परावाणी) सीधे हमारी मध्यमा (हृदय) को प्रभावित कर रही थी।"

प्रस्थान से पूर्व सर सी.पी. ने एक बार फिर पुणे सामूहिकता विशेष रूप से श्री पुगलिया को इतना सुन्दर आयोजन करने के लिए धन्यवाद किया। पूरी सामूहिकता अपनी परम पावनी श्रीमाताजी के सम्मुख नतमस्तक थी। ऐसे प्रतीत होता था मानो सर सी.पी. के मुख से स्वयं श्रीमाताजी बोल रही हों।

आनन्दमग्न सहजयोगियों की माँग पर एक बार फिर 'माता का करम' गाया गया। आनन्दमग्न हर कुण्डलिनी नाच उठी। आनन्द से झूमते हुए सर सी.पी. भी तालियाँ बजाए बिना न रह सके। ऐसा प्रतीत होता था मानो वो श्रीमाताजी से कह रहे हों, "देखो आपके जन्मदिवस पर आपके बच्चे कितने प्रसन्न हैं..... उन्हें आशीर्वाद दो.....!

जय श्रीमाताजी
(इन्टरनैट विवरण)

श्री कृष्ण पूजा

गारलेट– मिलान आश्रम – 6.8.1988

परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी का प्रवचन

आज हम यहाँ श्री कृष्ण पूजा करने के लिए एकत्र हुए हैं। विशुद्धि चक्र पर श्री कृष्ण के आगमन के महत्व को समझना हमारे लिए आवश्यक है। जैसे आप भली–भाँति जानते हैं, श्री ब्रह्मदेव एक या दो बार से अधिक अवतरित नहीं हुए। श्री गणेश भी केवल एक ही बार भगवान ईसा–मसीह के रूप में अवतरित हुए। परन्तु श्री विष्णु (विष्णु–तत्व) ने पृथ्वी पर बहुत बार जन्म लिया। देवी भी पृथ्वी पर बहुत बार अवतरित हुईं। उन्हें बहुत बार मिलकर कार्य करना पड़ा और विष्णु तत्व के साथ मिलकर महालक्ष्मी–तत्व ने लोगों की उत्क्रान्ति के लिए कार्य किया। अतः विष्णु तत्व आपकी उत्क्रान्ति के लिए है, मानव की विकास प्रक्रिया के लिए है। इसी आगमन (अवतरण) के माध्यम से और महालक्ष्मी की शक्ति के माध्यम से हम अमीबा से मानव बने। हमारे लिए यह सब स्वतः घटित होता है, परन्तु विष्णुतत्व को विकसित करने के लिए श्री विष्णु को बहुत से अवतरण लेने पड़े।

आप जानते हैं कि आरम्भ में श्री विष्णु मतस्य रूप में अवतरित हुए और भिन्न रूपों में अवतरित होकर श्री कृष्ण रूप में अवतरित हुए, जिन्हें 'पूर्णावतार' माना जाता है। परन्तु हमें समझना होगा कि वे (श्री विष्णु) हमारे मध्य नाड़ीतन्त्र पर कार्य करते हैं, हमारे मध्य नाड़ीतन्त्र की रचना करते हैं। हमारी विकास प्रक्रिया के माध्यम से हमारा मध्य–नाड़ी–तन्त्र बनाया गया है और इसी मध्य–नाड़ी–तन्त्र ने हमें हमारी मानवीय चेतना प्रदान की है, नहीं तो हम पत्थर की तरह से होते। इस चेतना की रचना के माध्यम से, हमारे अन्दर एक के बाद एक चक्र बनाकर यह विष्णु तत्व हमें उस अवस्था तक ले आया है जहाँ हम समझ सकें कि हमें सत्य–साधना करनी है और सहजयोगी बनना है।

अतः यह कृष्ण–तत्व (Principle of Shri Krishna) इतना महत्वपूर्ण है कि विशुद्धि चक्र पर पहुँचकर हम पूर्ण हो जाते हैं क्योंकि जब सहस्रार आपके लिए खुलता है तो आप चैतन्य लहरियाँ महसूस करने लगते हैं, अभी तक आप पूरी तरह से पूर्ण नहीं होते। यदि आप पूर्ण हो गए होते तो यह आपकी विकास प्रक्रिया का अन्त होता, उस अवस्था पर पहुँच जाने में यदि पूर्णता प्राप्त हो जाती तो सहजयोग की कोई आवश्यकता न होती। परन्तु वास्तव में इसका अर्थ ये है कि एक बार सहस्रार खुल जाने के बाद आपको वापिस अपने विशुद्धि चक्र पर आना पड़ता है अर्थात अपनी सामूहिकता के स्तर पर। विशुद्धि चक्र यदि ज्योतिर्मय नहीं हो तो आप चैतन्य लहरियाँ महसूस नहीं कर सकते। जैसे कल आपने देखा कलाकारों ने एक अत्यन्त नए आयाम में बजाना आरम्भ कर दिया। यह इसलिए नहीं था कि उनकी कुण्डलिनी जागृत हो गई। निःसन्देह कुण्डलिनी तो पहले से ही जागृत थी परन्तु इसे वापिस विशुद्धि चक्र पर आना पड़ा। मैं यदि इसे विशुद्धि चक्र पर वापिस न ला पाती तो उनके (कलाकारों) हाथ इतनी तेजी से न चलते, कभी उन्हें श्री कृष्ण के माधुर्य का एहसास न होता और न ही वे उस माधुर्य की अभिव्यक्ति कर पाते। अतः जो भी आपकी अंगुलियों और हाथों के माध्यम से अभिव्यक्त होता है उसमें माधुर्य सृजन करने की नई चेतना आ जाती है। आपकी कला में, संगीत में, हाव–भाव में, आपके हाथ हर प्रकार से महत्वपूर्ण हैं। परन्तु विशुद्धि चक्र की भी बहुत बड़ी भूमिका है। जैसा आप जानते हैं, इसकी सोलह पंखुड़ियाँ हमारी मुखाकृति, हमारे कान, नाक, आँखें और गर्दन की देखभाल करती हैं। इन सब अवयवों की देखभाल विशुद्धि चक्र करता है, परिणामस्वरूप आप महान अभिनेता बन सकते है, आपकी आँखें अत्यन्त पावन हो सकती हैं, आपकी त्वचा तेजोमय हो जाती है,

आपके कान परमेश्वरी संगीत सुन सकते हैं, और नाक आपकी गरिमा को दर्शाती है। इसी प्रकार से आपके चेहरे की अभिव्यक्तियाँ परिवर्तित हो जाती हैं। आप यदि कठोर व्यक्ति हैं, उग्र-स्वभाव हैं, आपके चेहरे पर यदि कठोरता है, आपका चेहरा यदि हर समय भिखारियों की तरह से बना रहता है, हर समय यदि आप रोते-बिलखते रहते हैं, तो आपकी मुखाकृति अत्यन्त दयनीय दिखाई पड़ती है। सभी कुछ परिवर्तित हो जाता है और मध्य में आ जाता है, जहाँ आप सुन्दर और दिव्य रूप से आकर्षक दिखाई देते हैं और आपकी मुखाकृति अत्यन्त मोहक हो जाती है।

दाँतों और जिह्वा की देखभाल भी विशुद्धि चक्र करता है, अतः आपके दाँतों के रोग भी ठीक हो जाते हैं.... आप.... जैसे मैंने आपको बताया, अपने जीवन में मैं कभी दाँतों के डॉक्टर के पास नहीं गई। तो आप समझ सकते हैं कि यदि आपका विशुद्धि चक्र ठीक है तो अब आपको डॉक्टर के पास नहीं जाना पड़ता। आपकी जिह्वा में भी सुधार होता है उदाहरण के रूप में कुछ लोग स्वभाव से व्यंग्यप्रिय (Sarcastic) होते हैं, वे कोई मीठी बात नहीं कर सकते, हर समय व्यंग्य करते हैं और व्यंग्यपूर्ण बातें कहते हैं। कुछ लोगों की भाषा बड़ी गाली-गुफ़्तार वाली होती है, कुछ लोग अत्यन्त भिखारियों जैसे होते हैं, हर समय भिखारियों की तरह से बात करते हैं, कुछ लोगों में गरिमा, माधुर्य और आत्मविश्वास नहीं होता। कुछ लोग हकलाते हैं, कुछ मंच पर खड़े होकर भाषण नहीं दे सकते। विशुद्धि चक्र के सुधरते ही ये सब कमियाँ दूर हो जाती हैं।

यह केवल बाह्य है, विशुद्धि चक्र पर श्रीकृष्ण की जागृति के माध्यम से आपके अन्दर विशुद्धि चक्र सुधारने की यह बाह्य अभिव्यक्ति है। वास्तव में होता क्या है कि अपने अन्तस में आप साक्षी बन जाते हैं, साक्षी अर्थात परेशान करने वाली, कष्ट देने वाली हर समस्या को आप अपने अन्दर देखने लगते हैं। साक्षीभाव से आप इसे देखते हैं और बिल्कुल व्याकुल नहीं होते। **उस देखने, उस साक्षी अवस्था में अद्‌भुत शक्ति होती है। निर्विचारिता में जिस समस्या को आप देखते हैं उस समस्या का समाधान हो जाता है।** आपको कोई भी समस्या हो, एक बार जब आप यह साक्षी अवस्था प्राप्त कर लेते हैं, यह तटस्थता प्राप्त कर लेते हैं अर्थात सागर के तट पर खड़े होकर आप लहरों के आवागमन को देखते हैं, तब आप जान जाते हैं कि समस्या का सामाधान किस प्रकार करना है।

अतः आपकी साक्षी अवस्था का विकसित होना आवश्यक है, और कभी-कभी, मैंने देखा है, साक्षी अवस्था विकसित करने में लोगों को कुछ कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। एक बार कुण्डलिनी का सहस्रार में से नीचे की ओर चैतन्य प्रवाहित करना, जो आपके चक्रों से प्रवाहित होकर भिन्न चक्रों का पोषण करे, आवश्यक है। विशुद्धि चक्र पर जब यह रुकती है तो वास्तव में आपको विक्षोभ की अवस्था में ले जाने का प्रयत्न करती है, और आप सोचने लगते है, "देखो मेरी पत्नी इतनी अच्छी थी, मुझे इतने आशीर्वाद प्राप्त थे और अब क्या हो गया है!" परन्तु यह वह समय है जब आपको तटस्थ हो जाना चाहिए अर्थात आपको साक्षी हो जाना चाहिए। यदि आप साक्षी हो जाएं तो सभी कुछ सुधर जाता है। उदाहरण के रूप में मान लो आप एक ऐसे व्यक्ति हैं जो किसी स्थान पर कार्य कर रहा है, ज्योंही वह साक्षी बनता है तो उसका चित्त अन्दर की ओर चला जाता है और वह अपने अन्दर से बाहर की चीजों को देखता है। परिणाम स्वरूप आप जान जाते हैं कि कहाँ पर क्या कमी है और क्योंकि आपमें साक्षित्व की शक्ति है, उस शक्ति से आप अपनी समस्याओं का समाधान कर लेते हैं।

परिस्थिति से लिप्त होने के स्थान पर यदि

आप उसे साक्षी भाव से देखना जानते हैं तो समस्याओं का समाधान अत्यन्त आसानी से हो जाता है। **यही सर्वोत्तम अवस्था है जिसे आप "साक्षी स्वरूपत्व" कहते हैं। यह अवस्था आपको तब प्राप्त होती है जब कुण्डलिनी ऊपर आती है और योग स्थापित होता है और दिव्य लहरियाँ झरने लगती हैं और आपके विशुद्धि चक्र को समृद्ध बनाती हैं।**

श्री कृष्ण का नाम 'कृष' शब्द से आया है जिसका अर्थ है जोतना–हल चलाना, फसल बोने के लिए ज़मीन में हल चलाना। उन्होंने ही हमारे लिए हल चलाने का कार्य किया है, अर्थात उन्होंने इस प्रकार से हमारा सृजन किया है कि बीजारोपण के समय हम पूरी तरह से तैयार हों। परन्तु हम मानव अपने विशुद्धि चक्र को बहुत सी गलत चीज़ों से खराब कर लेते हैं। जैसे आपने देखा है, हम धूम्रपान करते हैं, नशे लेते हैं, तम्बाकू खाते हैं आदि–आदि और इनसे हमारा विशुद्धि चक्र बिगड़ जाता है। इससे भी ऊपर यदि आप ऐसे व्यक्ति हैं जो बिल्कुल नहीं बोलता या बहुत अधिक बोलता है या जो चीखता चिल्लाता है और अपना क्रोध दिखाता है, ऊँची आवाज में बोलता है, तो ऐसा व्यक्ति अपने विशुद्धि चक्र को खराब कर लेता है।

अतः पहली चीज़ ये है कि अपने विशुद्धि चक्र का उपयोग करते समय आपको याद रखना है कि इसका उपयोग मिठास (माधुर्य) के लिए होना चाहिए। किसी को यदि आप कुछ कहना चाहते हैं तो कोई मधुर या अच्छी बात कहने का प्रयत्न करें, ऐसा करने का अभ्यास करें। कुछ स्थानों पर मैंने देखा है कि लोग इस प्रकार से बात करने के आदी होते हैं कि वे मधुरतापूर्वक बात कर ही नहीं सकते। उनके लिए ये अधर्म है, किसी से मधुरतापूर्वक बात करना। वो तो केवल ये मानते हैं कि उन्हें इस प्रकार से बात करनी चाहिए कि जिससे अन्य लोगों को चोट पहुँचे। किसी को चोट पहुँचाना श्री कृष्ण के धर्म में नहीं है– या तो वो वध कर देते थे और या वे बहुत मधुर थे, बीच की कोई बात नहीं है। लोगों के प्रति या तो मृदु होना है या फिर किसी को समाप्त कर देना है। अब आप वध करने का कार्य त्याग दीजिए। आपको तो केवल मधुर होना है। आप सबको परस्पर बहुत मधुर होना है, विशेष रूप से सहजयोगियों को परस्पर एक दूसरे के प्रति बहुत ही मधुर होना है। दूसरों से व्यवहार करते समय भी यदि आप उनमें कोई कमी देखें तो भी मधुरतापूर्वक उन्हें बताएं कि यह अच्छी बात नहीं है, अब आप सहज योग में आ गए हैं, आपको इस प्रकार से व्यवहार करना होगा।

श्री कृष्ण के जीवन ने एक अन्य महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। वे श्रीराम के अवतरण के पश्चात् पृथ्वी पर अवतरित हुए। श्रीराम भी श्री विष्णु के अवतार थे। श्रीराम जब पृथ्वी पर अवतरित हुए तो लोग अत्यन्त अज्ञानी थे, उन्हें धर्म की कोई समझ ही न थी। राजा होने के नाते उन्होंने लोगों को धर्म सिखाना चाहा और इस कारण से वे अत्यन्त गम्भीर हो गए। तो उनका अवतरण एक अत्यन्त गम्भीर पिता सा था जो अत्यन्त गम्भीरता पूर्वक सभी प्रकार की उथल–पुथल को निभा रहा है और हितकारी राजा के मूर्तरूप का सृजन कर रहा है। परिणामस्वरूप जब उनका अवतरण समाप्त हुआ तो लोग अत्यन्त गम्भीर–प्रवृत्ति बन गए और धर्म में अत्यन्त गम्भीरता आ गई। सभी प्रकार के कर्मकाण्ड आरम्भ हो गए, लोग अत्यन्त कट्टर हो गए और उन्होंने कठोरता पूर्वक जीवन के आनन्द को समाप्त कर दिया। उस कठोरता से बहुत सी अन्य चीजें आरम्भ हो गईं– ब्राह्मणवाद का आरम्भ।

जब लोगों ने ब्राह्मणवाद को जन्म सिद्ध अधिकार मान लिया तो भारत में ब्राह्मणवाद का आरम्भ हो गया, जबकि वास्तव में ब्राह्मण होना जन्म सिद्ध अधिकार नहीं है, व्यक्ति को ब्राह्मण बनना पड़ता है। आत्मसाक्षात्कार के पश्चात् आप ब्राह्मण बन जाते हैं,

ये सत्य केवल श्री कृष्ण के समय पर ही स्थापित नहीं हुआ, श्री राम के समय में भी इसकी स्थापना हुई क्योंकि श्री राम स्वयं भी ब्राह्मण नहीं थे। उन्होंने एक वाल्मीकि, एक निम्न जाति के मछुआरे से अपनी रामायण लिखवाई। आश्चर्य की बात है कि उन्होंने इस मछुआरे को रामायण लिखने को कहा जो ब्राह्मण भी नहीं था। उन्होंने उसे ब्राह्मण बनाया, बिल्कुल वैसे ही जैसे आप लोग ब्राह्मण बने हैं, अर्थात ब्रह्म को जानने वाले। ब्रह्म को जानने वाला व्यक्ति ही सच्चा ब्राह्मण होता है, किसी ब्राह्मण के घर जन्म लेने वाला नहीं।

इसी कारण इन तथाकथित धार्मिक लोगों को देखकर कई बार लोग परेशान हो जाते हैं। ये यदि इतने विकृत हैं और सभी प्रकार के पाप कर सकते हैं, तो ब्राह्मण कैसे हो सकते हैं? अतः इस प्रकार के धर्मों या इस प्रकार की कट्टरताओं का अनुसरण करके आप सुधर नहीं सकते। आप यदि ईसाई हैं तो ईसाईयों में एक चीज़ देखी जानी चाहिए कि उनकी दृष्टि अपवित्र नहीं होनी चाहिए। अब मैं ये जानना चाहूंगी कि कितने ईसाई पवित्र दृष्टि का दावा करते हैं! महिलाओं के प्रति यदि उनकी दृष्टि अपवित्र नहीं है तो अन्य चीजों के प्रति उनकी दृष्टि अपवित्र होगी। तो आप ये नहीं कह सकते कि ईसाई धर्म अपना कर आप वास्तव में ईसाई बन गए हैं।

इसी प्रकार से हम हिन्दुओं के बारे में भी कह सकते हैं। हिन्दूधर्म में श्री कृष्ण ने कहा है कि सभी के अन्दर आत्मा का निवास है। उन्होंने ये कभी नहीं कहा कि जन्म से 'जाति' निश्चित होती है। परन्तु हिन्दूधर्म में हम लोग विश्वास करते हैं कि हर व्यक्ति की अपनी जाति होती है तथा हर व्यक्ति भिन्न है। कुछ लोगों को निम्न मान कर व्यवहार किया जाता है और कुछ को उच्च मानकर। ऐसा करना श्री कृष्ण की शिक्षा के बिल्कुल विपरीत है क्योंकि उन्होंने कहा था कि सभी में आत्मा का निवास है।

अब सहजयोग में हमने साबित कर दिया है कि आप चाहे जिस धर्म को मानने वाले हों, जिन विचारों या दर्शन का आप अनुसरण करते हों, चाहे जिसको मानते हों, आप सब आत्मसाक्षात्कारी बन सकते हैं। अतः कोई न तो उच्च है न निम्न। कुछ लोग सोचते हैं कि यह मानना सर्वोत्तम है कि हमारे सिवाय सब गलत है। परन्तु ऐसा मानने वाले लोगों को सीधे नरक में जाना होगा क्योंकि वे सत्य तक नहीं पहुँचे हैं। सत्य ये है कि आपको आत्म-साक्षात्कारी बनना है। यदि आप आत्म-साक्षात्कारी नहीं हैं तो परमात्मा के समीप भी नहीं पहुँचे। आपको परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश करना होगा। स्वयं ईसामसीह ने कहा था 'आपको परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश करना होगा। आपको पुनर्जन्म लेना होगा और जब आप 'ईसा, ईसा' कहकर मुझे पुकारेंगे तो मैं तुम्हें पहचानूंगा भी नहीं।' उन्होंने ये बात स्पष्ट कही, आपको चेतावनी दी। मोहम्मद साहब ने भी स्वयं कहा कि 'कयामा के समय आपके हाथ बोलेंगे।' अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में उन्होंने कहा "कयामा के समय तक आप वे सारे कर्मकाण्ड करेंगे जैसे..... माला आदि-आदि। परन्तु कयामा आने पर जब आपको पुनर्जन्म प्राप्त हो जाएगा तब आपको यह सब नहीं करना पड़ेगा।" ये बात उन्होंने अत्यन्त स्पष्ट कही है। परन्तु कयामा को खोजने का प्रयत्न कोई भी नहीं करता, वे तो केवल एक चीज में दोष खोजते है दूसरी चीज़ में दोष खोजते हैं और परस्पर युद्ध करते हैं।

उनका बताया हुआ पुनर्जन्म का समय, जब आपके हाथ बोलेंगे, सहजयोग में है। **अतः आत्म-साक्षात्कार के पश्चात् आपको कोई कर्मकाण्ड नहीं करने।** उनके अनुसार अब आप पीर बन गए हैं। एक बार जब आप वली बन गए हैं तो आपको ये सब कर्मकाण्ड करने की कोई आवश्यकता

नहीं है क्योंकि आप धर्मातीत हो जाते हैं। भारतीय दर्शन में भी श्री कृष्ण ने कहा था कि आप 'धर्मातीत' हो जाते हैं। आप धर्म से ऊपर उठ जाते हैं अर्थात धर्म आपका अंग–प्रत्यंग बन जाता है। आपको बाह्य धर्म नहीं अपनाने पड़ते क्योंकि ये सब बेकार हैं। ये बात स्पष्ट कही गई थी। श्री कृष्ण ने यह बात इतनी स्पष्ट कही जितनी कोई अन्य व्यक्ति कह सकता..... अत्यन्त–अत्यन्त स्पष्ट..... कि आपको अपने गुणों से, धर्मों से ऊपर उठना है, अर्थात आपको ऐसा व्यक्ति बनना है जो अन्तर्जात रूप से धार्मिक हो, ऐसा व्यक्ति नहीं जो बाहर से ईसाई, हिन्दू या मुसलमान जैसा हो। नहीं। अन्दर से। अपने अन्दर आपको बनना है।

अब परिणामस्वरूप आपने वो देखा है जो श्री कृष्ण ने कहा था कि एक बार आप अन्दर से बन जाएं तो मुझे आपको ये नहीं बताना पड़ेगा कि 'शराब मत पिओ', 'ऐसा मत करो', 'वैसा मत करो', कुछ नहीं। आप ऐसा करते ही नहीं, बस, ऐसा करते ही नहीं और आप अच्छी तरह से समझ जाते है कि ये कार्य नहीं करना चाहिए, वो कार्य नहीं करना चाहिए।

इन सभी मूर्खतापूर्ण धार्मिक कर्मकाण्डों पर नियन्त्रण करने के लिए श्रीकृष्ण का अवतरण हुआ। ये बहुत महत्वपूर्ण अवतरण था, परन्तु मैं नही जानती कि कितने लोग इस बात को समझते हैं। वो ये दर्शाने के लिए आए थे कि यह सब लीला है, सारा परमात्मा का खेल है। गम्भीर होने की क्या बात है? कर्मकाण्डी बनने की क्या बात है? परमात्मा को आप कर्मकाण्डों में नहीं बाँध सकते, इसीलिए पृथ्वी पर उनका अवतरण हुआ, आपको यह बताने के लिए कि स्वयं को इन मूर्खतापूर्ण कर्मकाण्डों में नहीं जकड़ना चाहिए। उनके यही उपदेश थे। बहुत वर्ष पूर्व, ये उपदेश उन्होंने 6000 वर्ष पूर्व दिए थे। परन्तु आज भी यदि आप देखें तो हर धर्म में बहुत से कर्मकाण्ड चले जा रहे हैं! अवतरणों के प्रयाण के पश्चात् लोगों ने कर्मकाण्ड आरम्भ कर दिए, अजीब–अजीब कर्मकाण्ड। जब श्रीकृष्ण ने प्रयाण किया तो लोग नहीं जानते थे कि अब क्या करें। क्योंकि उन्होंने कहा था, "अब कर्मकाण्डों की आवश्यकता नहीं..... अब बस होली खेलो, प्रसन्न रहो, आनन्द मनाओ, नाचो और गाओ।" उन्होंने यही कहा था। अब क्या करें जब उन्होंने ये कहा है? तो लोगों ने एक नई चीज़ शुरु कर दी, "क्यों न इसे रोमांचक बना दें?" किसी भी चीज़ को विकृत करना मानव अच्छी तरह से जानता है। इस मामले में उनका कोई मुकाबला नहीं कर सकता। तो लोगों ने श्रीकृष्ण को अत्यन्त रोमांचक व्यक्तित्व बना दिया, राधा से प्रेम लीला करते हुए। 'रा–धा', 'रा' अर्थात शक्ति 'धा' अर्थात शक्ति को धारण करने वाली। परन्तु लोग श्री कृष्ण को राधा से रोमांस करते हुए दिखाते हैं.....! वे साक्षात् महालक्ष्मी थीं। ये लोग महालक्ष्मी से श्रीकृष्ण का सम्बन्ध इस प्रकार दर्शाते हैं मानो वो पति–पत्नी हों! बहुत से कवि उनका वर्णन पति–पत्नी के रूप में करने लगे तथा अन्य सभी प्रकार की मूर्खताएँ।

परमेश्वरी सम्बन्धों में पति–पत्नी जैसी कोई चीज़ नहीं। एक मादा शक्ति है और दूसरी गतिज (Kinetic) (नर) शक्ति। जिस प्रकार के सम्बन्ध मनुष्य दर्शाने का प्रयत्न करता है वैसा कोई सम्बन्ध नहीं है। मानव में परमेश्वरी अवतरणों को अपने स्तर तक लाने की आदत है। जैसा आपने देखा, "यूनानी लोग सबसे आगे थे जो महान अवतरणों को अपने स्तर पर खींच लाए। इसी प्रकार से जब वे श्री कृष्ण के साथ बहुत अधिक न कर सके तो उन्होंने सोचा ठीक है इन्हें रोमांटिक " व्यक्तित्व बना दो, ये हमारे लिए उपयुक्त होगा।"

बहुत से दुष्ट लोगों को ये बात बहुत पसन्द आई। हमारे यहाँ Wanhabin Laknow हुए जिनकी

365 पत्नियाँ थीं और वे कभी श्री कृष्ण की तरह वस्त्र धारण करते और कभी राधा की तरह और नृत्य करते। वे कहते, "अब मैं श्रीकृष्ण बन गया हूँ। श्रीकृष्ण के रूप में बाँसुरी बजाते हुए, अन्य सभी को अपनी गोपियाँ आदि, और सभी प्रकार की मूर्खतापूर्ण बातें कहते हुए बहुत से गुरु आए। अब भी बहुत से समूह इसी प्रकार से कार्य कर रहे हैं, ब्रह्मकुमारियाँ आदि। जब श्री कृष्ण केवल एक हैं तो बाकी सब गोपियाँ और गोप हैं, वो विवाह नहीं करते और सभी प्रकार की मूर्खताएं। विवाह न करना पूर्णतः बेतुकापन और विकृति है जो श्रीकृष्ण को भी बदनाम करती है।

श्रीकृष्ण योगेश्वर थे। वे योगेश्वर थे। वे इतने निर्लिप्त थे कि, एक बार उनकी पत्नियों, जो उनकी शक्तियाँ भी थीं, ने कहा कि हम "नदी पार किसी सन्त के पास जाना चाहती हैं। उन्होंने कहा, "ठीक है, जाती क्यों नहीं?" उन्होंने उत्तर दिया, "नदी चढ़ी हुई है, हम नहीं जानती कि नदी को पार कैसे करें? श्री कृष्ण ने कहा, ठीक है, जाकर नदी से कहो कि तुम नदी पार फलां सन्त के दर्शन करना चाहती हो और श्रीकृष्ण ने कहा है कि तुम शान्त हो जाओ। यदि श्रीकृष्ण योगेश्वर हैं, ब्रह्मचारी हैं तो तुम नीचे आ जाओ।"

वे नदी पर गईं और उससे कहा, "यदि श्रीकृष्ण की कोई पत्नी नहीं है और यदि वे योगेश्वर हैं तो कृपा करके अपना स्तर कम कर लो।" और नदी का स्तर घट गया। वो सब बहुत हैरान हुईं कि वे हमारे पति हैं फिर भी वे योगेश्वर हैं, वे इतने निर्लिप्त हैं!" उन्होंने नदी पार की, जाकर सन्त की पूजा की। सन्त ने कहा, "अब तुम वापिस जाओ।"

जब वे वापिस नदी पर आईं तो नदी उफ़ान पर थी। उन्होंने जाकर सन्त से पूछा "हम कैसे वापिस जाएं," उसने कहा, "तुम आईं कैसे थीं," उन्होंने बताया, "श्रीकृष्ण ने कहा था कि जाकर नदी से पूछो कि यदि मैं योगेश्वर हूँ तो तुम नीचे आ जाओ।" "ठीक है, जाकर नदी से कहो कि यदि सन्त ने कुछ नहीं खाया, और यदि वह पूर्णतः निर्लिप्त हैं तो हे नदी, तुम नीचे आ जाओ।" वो हैरान हो गईं। क्योंकि उन्होंने अभी सन्त को सभी कुछ खिलाया था, सन्त ने सभी कुछ खा लिया था।"

वो नदी पर गईं और कहा, "हे नदी, यदि सन्त ने कभी कुछ नहीं खाया, भोजन के विषय में यदि वह पूर्णतः निर्लिप्त हैं, उसने यदि खाना छुआ तक नहीं तो तुम शान्त हो जाओ।" और नदी का स्तर नीचे चला गया। वे बहुत हैरान हुईं, "ये कैसे हो सकता है कि सभी कुछ खाकर भी सन्त ने कुछ नहीं खाया!" इसका अर्थ ये है कि वह 'अस्वधा' की स्थिति में था, वह खाने में लिप्त नहीं था, वह निर्लिप्त था। इस बात पर उन्हें बहुत हैरानी हुई। मानवीय दृष्टिकोण से यह असत्य लगता है, परन्तु ऐसा है नहीं। ऐसा नहीं है, ये सत्य है। वे योगेश्वर हैं और अत्यन्त निर्लिप्त हैं।

तो लोग दिव्यत्व को नहीं समझते और सोचते हैं कि, "सोलह हजार पत्नियों और पाँच पटरानियों वाला व्यक्ति किस प्रकार ब्रह्मचारी हो सकता है?" श्री कृष्ण के लिए यह सम्भव था क्योंकि वे योगेश्वर थे। इसी प्रकार से आप सबको भी योगेश्वर बनना होगा। आप विवाहित हैं, आपके बच्चे हैं। मुझे खुशी है कि आप विवाहित हैं क्योंकि विवाह करना शुभ होता है। परन्तु आपको अपने परिवार से लिप्त नहीं होना.... मेरे बच्चे, मेरा परिवार। मैंने देखा है कि सहजयोग में आकर बहुत से लोग विवाह करते हैं और खो जाते हैं। क्योंकि उनके लिए... अब हो गया विवाह,..... मैं अब अपने परिवार का आनन्द ले रहा हूँ, उसकी देखभाल कर रहा हूँ।" पूरा ब्रह्माण्ड हमारा परिवार है– केवल 'मेरी पत्नी' और 'मेरे बच्चे' ही नहीं बल्कि पूरा ब्रह्माण्ड आपका परिवार है। आप सार्वभौमिक

मानव (Universal Being) हैं। हमेशा उन्होंने यही शिक्षा दी कि आप सार्वभौमिक मानव हैं और आपको पूर्ण का अंग-प्रत्यंग बनना होगा। जब आप पूर्ण के अंग-प्रत्यंग बन जाएंगे तो लघु-ब्रह्माण्ड (Microcosm) वृहत ब्रह्माण्ड (Macrocosm) जाएगा।

ये मात्र प्रवचन नहीं है, इसे आपके अन्दर घटित होना है। आपको अपनी सामूहिक चेतना विकसित करनी होगी। ये श्रीकृष्ण का उपहार है क्योंकि मस्तिष्क के स्तर पर वे विराट बन जाते हैं। तो अब हमारे अन्दर तीन व्यक्तित्व (Three Identities) हैं- हृदय पर शिव हैं, मस्तिष्क में श्री कृष्ण हैं, विराट रूप में और जिगर में ब्रह्मदेव हैं। तो हमारे अन्दर तीन देव हैं और पेट में, जिसे आप भवसागर कहते है, पूरा गुरु तत्व है जिसमें श्री आदिनाथ, मोहम्मद साहब से लेकर शिरडी साईंनाथ तक के सभी आदि गुरु विराजते हैं। ये सब गुरुतत्व है जिसकी हमने पिछली बार, Andorra में पूजा की थी।

तो जिस प्रकार ये परस्पर सम्बन्धित हैं, जिस प्रकार आपको साक्षी अवस्था तक लाने के लिए इन्होंने कार्य किया है वह महत्वपूर्ण है।

अब आपका विशुद्धि चक्र सुधरना आवश्यक है। सर्वप्रथम-कल दोषभाव बाधा इतनी अधिक थी कि इसें निकाल पाना असम्भव था। दोषभाव की कोई बात ही नहीं है। यह तो एक फैशन है, मात्र एक फैशन- 'मुझे खेद है' (I am Sorry)। सुबह से शाम तक मुझे खेद है, मुझे खेद है! आपको किस बात का खेद है? मानव होने का या सहजयोगी होने का? अतः व्यक्ति को अपने प्रति अत्यन्त प्रसन्न-चित्त होना चाहिए, "हर समय मुझे खेद है, मुझे ऐसा नहीं करना चाहिए था, मुझे वैसा नहीं करना चाहिए था।" हर समय दोषभावग्रस्त रहने से आपकी बाईं विशुद्धि बिगड़ती है। बाईं विशुद्धि के बिगड़ने से आपका कृष्णतत्व चला जाता है। तब आपको सामूहिकता का महत्व नहीं पता चलता, तब आप ये भी नहीं समझ पाते कि आपमें क्या खराबी आ गई है।

आपने यदि, "मुझे खेद है" कहना ही है तो परमात्मा के सम्मुख कहें और उसके बाद कभी न कहें कि 'मुझे खेद है, मुझे खेद है। सामना करें। कोई अपराध यदि हुआ है तो उसका सामना करें। ये बात गलत थी, ठीक है..... आगे ऐसा नहीं होगा। न तो इससे बहस करें और न ही इसे दोहराते रहें। बस इसका सामना करें और कहें कि ये कार्य गलत था और यह गलत कार्य मैं पुनः नहीं करूंगा, समाप्त। क्योंकि आखिरकार अब आप 'सन्त' बन गए हैं अब आप 'वली' बन गए है, आप 'आत्मसाक्षात्कारी' हो गए हैं, 'आत्मज' हो गए हैं। आपको ब्रह्मचैतन्य प्राप्त हो गया है। आपने देखा है कि आपके सिरों के ऊपर प्रकाश था, आपने इसका प्रमाण देखा है।

अब मुझे आपको दूसरा प्रमाण पत्र नहीं देना। बेहतर होगा कि आप अपनी अवस्था के प्रति जागृत हो जाएं, जैसा श्रीकृष्ण ने कहा था। आपको आत्मचेतन होना होगा। पहले आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करना और फिर अपनी स्थिति के प्रति चेतन होना। तब आप हैरान होंगे कि किस प्रकार आपमें यथोचित चित्त और यथोचित सूझ-बूझ विकसित होती है।

ज्यों ही आप जान जाते हैं कि आपको साक्षी अवस्था प्राप्त हो गई है तो ऐसा करना बहुत ही सुगम है। **अतः कृपया स्वयं को साक्षी बना लें। किसी चीज् को देखते ही निर्विचार चेतना में चले जाएं। ये आपका किला है।** विचार न करें, चीज् के अन्दर के सौन्दर्य को देखें। अपने अन्दर उतारते हुए, केवल देखें कि किस प्रकार ये पेड़ शान्तिपूर्वक खड़े होकर आप सबको देख रहे हैं। बिल्कुल निश्चल होकर, कोई भी हिल-डुल नहीं रहा है। वो अपना एक पत्ता भी नहीं हिलने देते..... आप भी ऐसा ही करें। जब तक शीतल वायु बहने नहीं लगती, जबतक माँ (श्रीमाताजी) शीतल

वायु प्रवाहित नहीं करतीं, तब तक हमें शान्त रहकर देखना है। इन पर्वतों को देखें किस प्रकार ये निरन्तर हर चीज़ को देख रहे हैं और आनन्द एवं सौन्दर्य प्रसारित कर रहे हैं। इसी प्रकार से हमें भी साक्षी बनना हैं। बहुत अधिक बोलने की हमें आवश्यकता नहीं है और न ही बिल्कुल चुप रहने की है। मध्य में रहते हुए हमें चाहिए कि साक्षी रूप से 'लीला' मानकर सब कुछ देखें। इसी कारण से वे 'लीलाधर' कहलाए अर्थात वह व्यक्ति जो लोगों की लीला को आश्रय देता है।

यह न तो आपको पागल बनाता है और न ही हास्यास्पद, ये तो आपको आनन्दित करता है। श्रीकृष्ण का विष्णुतत्व ही आनन्द प्रदायक है। मुझे आशा है, कि भविष्य में हम अपने विष्णुतत्व का वैसे ही आनन्द लेंगे जैसा ध्यान–धारणा करके आपने पहले भी लिया था, क्योंकि **जब हम ध्यान धारणा करते हैं तो निर्विचार समाधि में जाते हैं और जब निर्विचार अवस्था में होते हैं केवल तभी उन्नत होते हैं, अन्यथा उन्नत नहीं हो सकते। जो चाहे करने का प्रयत्न करें, उन्नत नहीं हो सकते। ध्यान धारणा किए बिना हम निर्विचार चेतना में नहीं जा सकते।**

जो लोग जीवन में किसी भी पेशे में, किसी भी आयाम में उन्नति करना चाहते हैं या जो महान कलाकार, महान वैज्ञानिक आदि बनना चाहते है उनके लिए ध्यान धारणा आवश्यक है। सहजयोग में ध्यान धारणा करना आवश्यक है, अन्यथा कुण्डलिनी नीचे आ जाएगी और आप सारी प्रतिभाएं खो देंगे। ये सत्य है जो बताया जाना आवश्यक है और आपने देखा है कि लोग किस प्रकार परिवर्तित हुए हैं।

परन्तु कभी–कभी यह स्थिति बहुत अस्थाई हो सकती है और यदि लोग ठीक प्रकार से ध्यान नहीं करते तो कुण्डलिनी नीचे जा सकती है। साक्षी अवस्था प्राप्त करने के लिए मैं आप सबको शुभ कामनाएं देती हूँ। साक्षी अवस्था में हम किसी भी प्रकार के अटपटे ढंग से स्वयं को अभिव्यक्त नहीं कर सकते, परन्तु अपने अन्दर स्वयं को देखते हुए अपनी अभिव्यक्ति करते हैं।

क्योंकि हमीं ने सारी समस्याओं की सृष्टि की है और केवल हम ही स्वयं को स्वयं से अलग करके इन समस्याओं को देख सकते हैं और इनका समाधान कर सकते हैं। परमात्मा की कृपा से, मैं जानती हूँ, आप सब बहुत उन्नत होंगे और यह अवस्था प्राप्त कर पाएंगे। हर स्थिति में चाहे ये वरदान हो, उन्नति हो या उथल–पुथल की स्थिति हो, आपको आगे बढ़ने के योग्य होना चाहिए। यात्रायोग्य समुद्री जहाज़ वही होता है जो न केवल सुगम यात्राएं कर सकता है परन्तु उथल–पुथल और तूफानों का भी सामना कर सकता है।

परमात्मा आपको धन्य करें।

(रूपान्तरित)

हँसा चक्र पूजा

Green Ashachu, जर्मनी – 10-7-88

परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी का प्रवचन

आज हमने जर्मनी में हँसा चक्र पूजा करने का निर्णय लिया है। हँसा चक्र पर हमने कभी अधिक ध्यान नहीं दिया है परन्तु मैं सोचती हूँ कि पाश्चात्य विश्व के लिए, भारत या पूर्वी विश्व की अपेक्षा, यह कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। इसका कारण ये है कि हँसा चक्र पर ईड़ा और पिंगला के कुछ भाग की अभिव्यक्ति होती है। इसका अर्थ ये हुआ कि ईड़ा और पिंगला की अभिव्यक्ति हँसा चक्र के माध्यम से होती है। **तो हँसा चक्र वह चक्र है जो यद्यपि आज्ञा चक्र तक नहीं गया फिर भी जिसने ईड़ा और पिंगला के कुछ सूत्र या कुछ भाग थामे हुए हैं और ये सूत्र नाक की ओर प्रवाहित होने लगते हैं, आपकी आँखों से, मुँह से और मस्तक के माध्यम से इनकी अभिव्यक्ति होने लगती है।** आप जानते हैं कि विशुद्धि चक्र की सोलह पंखुड़ियाँ हैं जो आँख, नाक, जिह्वा, गला और दाँतों की देखभाल करती हैं परन्तु इनकी अभिव्यक्ति का कार्य हँसा चक्र के माध्यम से होता है, इन सबकी। अतः पश्चिमी मस्तिष्क के लिए हँसा चक्र को समझ लेना अत्यन्त–अत्यन्त महत्वपूर्ण है। संस्कृत में इसके विषय *में एक सुन्दर दोहा है:*

हँसः श्वेतः बकः श्वेतः
को भेदो हँसः बकः,
नीर क्षीर विवेकेतु,
हँसः हँसः बकः बकः।

अर्थात हँस और बगुला दोनों श्वेत होते हैं। परन्तु दोनों में क्या अन्तर है। दूध में पानी मिलाकर यदि हँस के सम्मुख रख दें तो हँस इसमें से केवल दूध पी लेगा और पानी को छोड़ देगा। हँस दूध और पानी के भेद को समझता है, जबकि बगुला ऐसा नहीं कर सकता। यह समझना सहजयोगियों के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि अपने अन्दर सद्–सद् विवेकबुद्धि को गहनतापूर्वक समझना है और यह भी कि किस प्रकार सद्–सद् विवेकबुद्धि विकसित की जाए। परन्तु इससे पूर्व कि हम वहाँ तक जाएं, आइए देखें कि किस प्रकार वह विवेकबुद्धि हमारी अभिव्यक्तियों का बाहर प्रकटीकरण करती है।

पश्चिम के हम सभी लोग हमेशा बाहर अपनी अभिव्यक्ति करते हैं। आप कैसे दिखाई देते हैं ये महत्वपूर्ण है। आप कहाँ जाते हैं, क्या करते हैं, क्या देखते हैं, ये सब भी महत्वपूर्ण है। ये महत्वपूर्ण है कि आपका रंगरूप (Appearance) अच्छा होना चाहिए। लोग इस मामले में बहुत ही सावधान हैं, वे अपना रंगरूप सुधारने पर बहुत समय खर्च करते हैं। ये कम से कम है। फिर उनका एक तरीका है जिसे आप मीडिया कहते हैं। देश मीडिया के माध्यम से बोलता है और मीडिया को प्रशिक्षित होना आवश्यक है। हर देश की अपनी विशेषता है, एक से बढ़कर एक। जब आप उन सबको देखते हैं तो पता चलता है कि उनमें सद्सद् विवेकबुद्धि का पूर्ण अभाव है। हमारी वाणी में, हमारी साहित्यिक अभिव्यक्ति में, काव्याभिव्यक्ति में, दूसरों के प्रति हमारे सम्बन्धों की अभिव्यक्ति में, किसी भी प्रकार की अभिव्यक्ति में सद्–सद् विवेक की आवश्यकता पड़ती है क्योंकि सद्–सद् विवेक अन्तःस्थित गहनज्ञान है या विवेक है।

पश्चिम के लोग यदि इतने बाह्यमुखी न होते, तो मैं सोचती हूँ, वो कहीं बेहतर होते। मान लो इंग्लैण्ड के लोग यदि पंक (Punk) न बने तो बाकी के लोग उनपर हँसेंगे। वो सोचेंगे कि देखो इस व्यक्ति के पास पंक बनने के लिए पैसा नहीं है। तो एक प्रकार का फैशन समाज में प्रचलित हो जाता है जिसमें विवेक का पूर्ण अभाव होता है और जो अत्यन्त अपमानजनक होता है। गहन परम्परावादी तथा जीवन

की यथोचित सूझ–बूझ वाले देशों में फैशन क्रियान्वित नहीं होते। निःसन्देह जो देश बहुत प्राचीन हैं, जो परम्परानुसार गलतियों और प्रयासों द्वारा स्वयं को सुधारने के प्रयत्न में लगे रहे हैं, उनमें कहीं बेहतर विवेक विकसित हुआ है। उनमें उन देशों के मुकाबले में कहीं बेहतर सूझ–बूझ विकसित हुई है जिन्हें अग्निपरीक्षा (Ordeals) में से नहीं गुजरना पड़ा, जिन्होंने अनुशासन को न तो क्रियान्वित किया और न ही जो अनुशासन में रहे, जिनमें सद्–सद् विवेकबुद्धि का अभाव है। यही कारण है कि बहुत से लोग गहन इच्छा के होने के बावजूद भी साधना में भटक गए हैं। यदि उनमें सद्–सद्–विवेकबुद्धि होती तो वे न भटकते, गलत स्थानों पर न जाते, परन्तु सद्–सद् विवेक का अभाव था। तो बात सद्–सद् विवेक पर आ जाती है कि किस प्रकार ईड़ा नाड़ी और पिंगला नाड़ी का उपयोग भले–बुरे में भेद करने के लिए किया जाए। ईड़ा नाड़ी बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमें विवेक केवल पारम्परिक सूझ–बूझ के माध्यम से ही आता है। श्री गणेश के स्थान (मूलाधार) से ईड़ा नाड़ी का आरम्भ होता है।

यदि हमें यह विवेक उन्नत करना है तो मूलाधार पर पावनता और मंगलमयता का पोषण, सबसे बड़ा आश्रय है। हम हमेशा उन चीज़ों को अपनाते हैं जो हमारी उत्क्रान्ति के लिए बाधक तो हैं ही, वे हमें, केवल हमें ही नहीं पूरे देश को नष्ट भी कर सकती है। सद्–सद् विवेक के अभाव में हमें ऐसे लोग अच्छे लगते हैं जो विध्वंसक हैं। **विवेक का अर्थ अच्छी, हितैषी, सामूहिकता के लिए हितकर और उत्क्रान्ति में सहायक चीज़ों को चुनना है।** इसके विपरीत विवेकहीन लोग फ्रॉयड जैसे गलत लोगों के जाल में फँस जाते हैं। कहने से अभिप्राय ये है कि कोई भारतीय तो फ्रॉयड पर विश्वास कर ही नहीं सकता, कोई इस बात पर विश्वास नहीं कर सकता कि आप इस प्रकार के मूर्खतापूर्ण विचारों में फँस सकते हैं। परन्तु लोग तो फ्रॉयड को ईसा–मसीह से कहीं अधिक मानते हैं क्योंकि विवेक का पूर्ण अभाव है। उनमें यदि पारम्परिक विवेक होता तो वे बच जाते। यह पारम्परिक विवेक ईड़ा नाड़ी के माध्यम से आता है।

परन्तु लोग इसे बन्धनग्रस्त होना मानते है और कहते हैं कि बन्धन ग्रस्त होना बहुत बुरी बात हैं लोगों को बन्धन ग्रस्त नहीं होना चाहिए, बन्धन मुक्त होना चाहिए। परन्तु यह बिल्कुल गलत धारणा है। इस धारणा में भी विवेक बिल्कुल नहीं है। कौनसी प्रतिबन्धता (Conditioning) अच्छी है और कौन सी बुरी, ये बात देखी जानी चाहिए। प्रतिबन्धनों के विषय में सद्–सद्–विवेक के अभाव के कारण, हम पूर्वजों से मिले अनुभवों तथा परम्पराओं को भी त्यागते चले जा रहे हैं। इतिहास को भी त्यागा जा रहा है और हम कहते हैं, "ओह, नहीं हम इससे ऊपर हैं।" हम स्वयं को स्वतन्त्र मानते हैं। जैसे कल, मैं हैरान थी, हवाई जहाज़ में किसी ने मुझे बताया कि "जब मैं निर्वस्त्र होता हूँ तो मुझे लगता है मैं अत्यन्त स्वतन्त्र हूँ।" कहने से अभिप्राय ये है कि यदि वस्त्र आपकी स्वतन्त्रता का हनन करते हैं तो वास्तविक जेलों का क्या होगा। वे आपके लिए क्या करेंगी? परन्तु इस प्रकार के अटपटे विचार लोगों के मस्तिष्क में आते हैं और वो सोचते हैं कि हम अपनी सारी मूर्खता को तर्कसंगत ठहरा सकते हैं क्योंकि ऐसा करने की स्वतन्त्रता हमें है। बुद्धि विवेक नहीं हो सकती। जहाँ तक प्रतिबन्धनों (conditioning) का सम्बन्ध है, बुद्धि विवेक नहीं हो सकती। सहजयोगी के लिए यह समझ लेना आवश्यक है कि विवेक किस प्रकार विकसित करना है।

कल मैंने पैरिस की महिलाओं को, या मैं कहूंगी कि फ्राँस की महिलाओं के विवेक विषय पर बहुत सुन्दर भाषण दिया था। अन्तर्बोध (Intution)

ईड़ा–नाड़ी का विवेक है। ध्यान–शक्तियों के माध्यम से यदि आप अपने अन्दर वह विवेक विकसित कर लें तो आपमें अन्तर्बोध विकसित हो जाता है और अन्तर्बोध हमारे चहुँ ओर विद्यमान गणों की सहायता के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं। आप यदि गणों से सहायता लेना सीख लें तो अपनी बुद्धि के अधिक उपयोग के बिना ही आप अन्तर्बोधी (Intutive) हो सकते हैं और सही चीजें बता सकते है। पूरा सहजयोग या मैं कहूँगी कि कम से कम इसका 50 प्रतिशत अन्तर्बोध पर आधारित है। उसके लिए आपको श्री गणेश का यथोचित संवेदन विकसित करना होगा, श्री गणेश को उनके सही अर्थो में समझना होगा। वहीं से सब आरम्भ होता है, क्योंकि वे गणपति हैं, वही सब गणों के स्वामी हैं। तो गण अन्तर्बोध के साथ जीवित रहते हैं। उदाहरण के रूप में मुझे कहीं जाना होता है, परन्तु मैं कह देती हूँ, नहीं, कल मैं वहाँ नहीं जा पाऊंगी। किसी भी कारण मैं वहाँ नहीं जाती। लोग मुझसे पूछते हैं श्रीमाताजी आप कैसे जानते हैं? मैं जानती हूँ क्योंकि गण हैं और जो वो बताते हैं वो सत्य है, वो सभी कुछ जानते हैं। किसी के बारे में मैं जो कहती हूँ वह सत्य साबित होता है। लोग मुझसे पूछते हैं, 'आपने इसके विषय में कैसे जाना?' अपने अन्तर्बोध से मैंने जान लिया। जैसे मैंने यदि हवाई–जहाज पकड़ना हो तो अपने अन्तर्बोध से मैं जान जाती हूँ कि क्या होने वाला है। श्री गणेश पूजा द्वारा यह गुण विकसित होता है। अतः कल्पना करें कि श्री गणेश हँसा चक्र के एक भाग को भी नियन्त्रित करते हैं। जब हम कहते हैं 'हँ' और 'सा', तो ये दोनों वास्तव में आज्ञा के बीज मन्त्र हैं। परन्तु जब आज्ञा पकड़ती है तो हँसा चक्र का कार्य आरम्भ हो जाता है। यही कारण है कि आज्ञा के मूल में हँसा चक्र है। हँ अर्थात 'मैं हूँ'। आपमें यदि विवेक है तो आप फैशनों में नहीं फँसेंगे। मूर्खतापूर्ण धारणाओं पर आपको हँसी आएगी। आपका अपना व्यक्तित्व है। आप सहजयोगी हैं। उन लोगों की बातें न सुने जो सहजयोगी नहीं है। यह 'हँ' भाग है, 'मैं हूँ।' अहं नहीं, हँ। ये समझने के लिए कि मैं योगी हूँ, ऐसी बहुत सी बातें जानता हूँ जो प्रायः लोग नहीं जानते, इसलिए उनसे मुझे कुछ नहीं लेना–देना। मुझे उनसे कोई सबक नहीं लेना। वो मुझे कुछ सिखाने के लिए नहीं हैं, जितना सूक्ष्मज्ञान उन्हें है उससे कहीं अधिक मुझे है। 'स्वयं' के प्रति चेतन होना', 'हँ' है। मैं कहूँगी कि यह दाईं ओर से आता है। 'हँ', दाईं ओर का विवेक है। और 'सा' बाईं ओर का विवेक है। 'सा' अर्थात 'तुम' अर्थात आप वही हैं। जहाँ तक आपका सम्बन्ध है आप जानते हैं कि 'तुम' कौन है। परन्तु अन्य लोगों के लिए 'तुम' दिव्य है। 'केवल आप ही हैं,' ये बाईं ओर से आता है, यह 'सा' है।

तो हँसा शब्द दो प्रकार के विवेकों से बना है कि 'मैं हूँ', 'हँ' को कहाँ देखना है और 'सा' को कहाँ देखना है। इन दो संतुलनों पर, जैसा सुन्दरता पूर्वक दिखाया गया है, सूर्य और चाँद, क्रॉस इसका मध्य है जो आपको सन्तुलन प्रदान करता है, जो आपको धर्म प्रदान करता है। किस प्रकार चीज़ें परस्पर जुड़ी हुई हैं, एक के बाद एक, तहों के बाद तहें। आप देख सकते हैं कि धर्म किस प्रकार विवेक से जुड़ा हुआ है!

कुछ ऐसे भी लोग हैं जो अचानक किसी प्रकार के कर्मकाण्ड में फँस जाते हैं! उदाहरण के रूप में, मैंने देखा है, कुछ सहजयोगी पूजा के लिए आते हैं और पागलों की तरह से बन्धन देते रहते हैं। रास्ते पर चलते हुए वे बन्धन देते हैं, जहाँ कहीं भी वे जाते हैं पागलों की तरह से बन्धन देते हैं। ये मात्र प्रतिबन्धता (Conditioning) है, ये विवेक नहीं है, ये सहजयोग नहीं हैं। ये देखा जाना चाहिए कि बन्धन देना चाहिए या नहीं? श्रीमाताजी के साक्षात् में तो बन्धन होता ही है। स्वयं को बन्धन देने की क्या आवश्यकता है? परन्तु मैं जब बोल रही होती हूँ तो लोग बन्धन दे रहे

होते हैं, अपनी कुण्डलिनी उठा रहे होते हैं! मैं सोचती हूँ ये सब पागल लोग हैं। इसी प्रकार से कुछ और लोग हैं। कल मैंने सुना कि सभी आश्रमों में एक ही प्रकार के संगीत का रिकार्ड बजाया जाता है क्योंकि इस संगीत में वे इस प्रकार उछल–कूद कर सकते हैं मानों ऊँट पर बैठे हैं। ये संगीत इनको प्रिय है। सभी को ये रिकार्ड अच्छा लगता है। क्यों? क्योंकि वे ऊँट की तरह से उछल सकते हैं। एक बार यदि आप ऊँटों की तरह से उछलने लगे तो फिर इसे छोड़ नहीं पाते, ये आदत बन जाती है। तो यह विशेष संगीत उन्हें अच्छा लगता है। ऊँट की तरह से वे उछले चले जाते हैं क्योंकि अब वे ऊँट बन गए हैं, उन्हें ऊँटों की तरह से व्यवहार करना होगा। हो सकता है दुड़की लगाने लगें। एक बार जब वे इसे सुन लेते हैं तो अचानक उसी लय पर चलने लगते हैं। अब वे घोड़े बन जाते हैं और सरपट दौड़ते हैं। घोड़े बनकर उन्हें केवल सरपट संगीत अच्छा लगता है। तो ये सब चलता रहता है। वे गधे भी बन सकते हैं, कुछ भी बन सकते हैं।

हम पशु नहीं हैं हम मानव हैं। 'हँ' 'हम हैं', हम सहजयोगी हैं। किसी विशेष प्रकार की लय या संगीत का हमारे ऊपर नियंत्रण नहीं है। सभी प्रकार के संगीत को हम समझ और सराह सकते हैं, बशर्ते कि वह धार्मिक हो, बशर्ते कि वह मंगलमय हो और पावन हो। तो आप देख सकते हैं कि हँसा चक्र पर कितनी चीज़ों का निर्णय होता है। **मेरे विचार से पूरा सहजयोग हँसा चक्र के सन्तुलन पर खड़ा है। कुछ लोग बहुत ईमानदार होते हैं, परन्तु यह ईमानदारी मूर्खता की सीमा तक जा सकती है। कुछ लोग कठोर परिश्रमी भी हैं, कठोर परिश्रम भी मूर्खता की सीमा तक जा सकता है। तो अच्छे समझे जाने वाले ये गुण धर्मपरायणता नहीं हो सकते। गौरवान्वित–विवेक ही धर्मपरायणता है।**

आपमें यदि विवेक है तो उस विवेक को आप धर्मपरायणता से गौरवान्वित करते हैं। जैसे आप ईसा–मसीह का उदाहरण ले सकते हैं। ईसा–मसीह में ये विवेक था। जब मेरी मेगडेलिन नामक वेश्या को पत्थर मारे जा रहे थे, यद्यपि उनका वेश्या से कुछ लेना देना नहीं था, कोई लेना–देना नहीं था, कोई सम्बन्ध नहीं था फिर भी अपने विवेक द्वारा वे देख पाए कि उसे पत्थर मारने का इन लोगों को कोई अधिकार नहीं है। पूर्ण साहसपूर्वक वे खड़े हो गए और कहने लगे, "जिन्होंने कभी पाप नहीं किया वो मुझ पर पत्थर फेंक सकते हैं।" यह उनके विवेक की शक्ति है, जिसे एक दम से लोगों ने अपने अन्दर महसूस किया और उस विवेक द्वारा उन्हें लगा कि "यह व्यक्ति पावन व्यक्ति है और हम उस पर पत्थर नहीं फेंक सकते।" सहजयोगियों के रूप में यदि आप विवेकशील हैं तो आप अन्य लोगों को भी विवेकशील बनाएंगे। अन्य लोगों को भी विवेकशील होकर समझना पड़ेगा। यदि आप अपने अन्दर यह विवेक विकसित कर लें तो ये 'नीर–क्षीर'–विवेक, दूध और पानी में, बुरे–भले में अन्तर देखने का गुण आपमें भी आ सकता है।

सहजयोग में भी हर कदम पर दाईं ओर (आक्रामकता) के अविवेक के कारण लोगों को डगमगाता देख सकते हैं। दाईं ओर का ये अविवेक लोगों में अहं की अभिव्यक्ति के कारण आता है। ये अहं, जैसे मैंने कहा 'हँ' है। जब आवश्यकता होती है तब ये अहं कार्य नहीं करता। उदाहरण के रूप में मुझे पता चला कि कुछ लोग विवाह के लिए चर्च में गए। निःसन्देह सहजयोगियों का ऐसा करना गलत है। हम मानव द्वारा बनाए गए धर्मों में विश्वास नहीं करते, ये बात आप जानते हैं। ठीक है, आप चर्च गए। परन्तु उन्होंने एक, महिला को लौरा एशले परिधान खरीदने के लिए लन्दन भेजा और मैं ये भी सोचती हूँ कि कुछ पुरुषों ने भी अवश्य विवाह के लिए टेलकोट पहने होंगे। तो अहं समाप्त कहाँ हुआ? सहजयोगी होने का

अहं तो पूरी तरह खो गया था। मेरे ख्याल से ये लोग बाल बनवाने के लिए और सभी प्रकार की चीज़ों के लिए भी गए होंगे और मूर्ख पादरियों की कब्रों के समीप चर्च में पुराने ईसाइयों की तरह से जाना चाहा होगा। ऐसा केवल यहीं नहीं है। जहाँ तक धर्म का सम्बन्ध है, भारत की स्थिति तो और भी खराब है। वामपक्ष, वे तो अत्यन्त–अत्यन्त बन्धनग्रस्त लोग हैं, उन्हें तो समझ ही नहीं आता कि विवेक है क्या? उदाहरण के लिए हमारे यहाँ ज्ञानदेव हुए। वे महान अवतरण थे, उनके पैरों में जूते भी नहीं थे। और आजकल श्री ज्ञानदेव के जूते पालकी में रखकर के लोग उनका जुलूस निकालते हैं और हज़ारों–हज़ार लोग उनका स्तुति गान करते हुए उनकी पालकी के साथ चलते हैं, कल्पना करें! उन्हें कौन बताए कि ज्ञानदेव के पास तो जूते थे ही नहीं। पालकी पर तुम कौन से जूतों का जुलूस निकाल रहे हो? जुलूस जिस गाँव या शहर में जाता है वहाँ उन्हें शानदार खाना खिलाया जाता है। हर आदमी उनके पैरों में पड़ता है– 'पालकी के साथ सन्त आए हैं। पालकी में रखे हुए जूते कभी भी ज्ञानदेव के नहीं थे!

तो ये पागलपन चलता रहता है। अपने चहुँ ओर ये चीज़ें घटित होते हुए आप देखते हैं, सभी देशों में, सभी धर्मों में, सभी क्षेत्रों में, आप ये सब घटित होते हुए देख सकते हैं। परन्तु आप भी इसमें सम्मिलित हो जाते हैं, इससे एकरूप हो जाते हैं और तब ये समझना कठिन हो जाता है कि आपको क्या हो गया है! ये अहं जब ठीक प्रकार से उपयोग किया जाता है तो यह विवेक बन जाता है। धर्म के अतिरिक्त, लोगों में एक अन्य अत्यन्त–अत्यन्त भयानक बन्धन भी है– वह है देशों का बन्धन, "मैं भारत से सम्बन्धित हूँ, मैं जर्मनी से हूँ, मैं इंग्लैण्ड से सम्बन्धित हूँ।" सभी कुछ व्यर्थ है। कहने से अभिप्राय है कि **ऐसा कुछ कहने का मतलब ये है कि अभी तक आप सहस्रार के स्तर तक उन्नत नहीं हुए हैं।** जो लोग किसी राष्ट्र विशेष का होने का दावा करते हैं वो नहीं जानते कि उनकी राष्ट्रीयता परिवर्तित हो चुकी है। परमात्मा के साम्राज्य में जाने के लिए आपको किसी पासपोर्ट की आवश्यकता नहीं पड़ती। राष्ट्रीयता मोटे–मोटे अक्षरों में आपके चेहरों पर लिखी होती है। परन्तु अब भी अन्तःस्थित गहनबन्धन बने हुए हैं कि मैं 'इस देश से' सम्बन्धित हूँ। मेरा देश बहुत महान है, तुम्हारा देश इतना अच्छा नहीं है।' विवेक ये सोचना है कि 'ठीक है मेरा जन्म जर्मनी में हुआ और जर्मनी ने बहुत सी गलतियाँ की। क्यों न मैं इन गलतियों को सुधारूं, ताकि मैं अपने जर्मन लोगों को एक ऐसे क्षेत्र में ले जाऊं जहाँ शान्ति, आनन्द और प्रसन्नता का साम्राज्य है। यहाँ इस बन्धन का उपयोग विवेक के रूप में किया जाता है। आप पाएंगे कि हर चीज़ के दो पक्ष हैं। ये आपके विवेक पर निर्भर है कि आप किधर जाते हैं।

उदाहरण, के रूप में कुछ लोगों में बन्धन हैं, विशेष रूप से धर्म के बन्धन। मान लो वे यहूदी धर्म से हैं और सहजयोग में आ गए है या ईसाई धर्म से हैं और सहजयोग में आ गए हैं। तो अब विवेक क्या है? ज्योंही कोई अन्य यहूदी या ईसाई आता है तो वे भूतों की बिरादरी बना लेते हैं और गहन मित्र बन बैठते हैं। "क्योंकि वह यहूदी है और मैं भी यहूदी हूँ, मेरे पिता यहूदी हैं, मेरी माँ यहूदी है, मेरी ये चीज़ यहूदी है।" ईसाईयों का भी यही हाल है, अन्य जातियों और राष्ट्रों का भी यही हाल है।

साधना में विवेक का क्या अर्थ है? सर्वोत्तम चीज़ उस बिन्दु पर विवेक ये देखना है कि अवतरणों की मृत्यु के बाद बने मानवरचित धर्मों में क्या बुराईयाँ हैं। या हम कह सकते हैं कि अवतरणों तथा पैगम्बरों द्वारा चलाए गए धर्मों में? ये प्रथम विवेक है। दूसरा विवेक उन धर्मग्रन्थों को पढ़कर ये पता लगाना है कि उन अवतरणों ने ऐसी कौन सी विशेष चीज़ लिखी

थी। मैं कहूंगी कि यदि कोई व्यक्ति मुसलमान है तो वह कुरान को गहनता पूर्वक पढ़े और पता लगाए कि कुरान में सहजयोग सम्बन्धित क्या लिखा है। यदि कोई ईसाई है तो वह बाइबल को पढ़कर पता लगाए कि इसमें सहजयोग से सम्बन्धित क्या है। क्योंकि सहजयोग सत्य है और जो सत्य लिखा हुआ है उसका पता लगाना होगा। ऐसी चीज यदि विकसित हो जाए तो आप आगे बढ़ सकते हैं। आप यदि बहादुर हैं तो साहस पूर्वक लोगों से यह बता सकते हैं कि देखो तुम किस मूर्खता के पीछे दौड़ रहे हो, यह न तो लिखी हुई है और न ही की गई है।

जो भी कुछ लिखा गया है वह पूर्ण का सार है। यह तीसरी अवस्था है जहाँ किसी धर्म या राष्ट्रीयता विशेष के सम्बन्धों में आपने अपने विवेक का उपयोग किया है।

मैं जब पश्चिम में होती हूँ तो मुझे पश्चिम के बारे में बात करनी होती है। परन्तु जब मैं भारत में होती हूँ तब भी अवश्य मुझे सुने। वहाँ की भाषा को न समझ पाना आपके हित में है, भारतीयों के प्रति पूर्ण सम्मान भाव से मैं उनकी खूब डाँट-डपट करती हूँ और उन्हें बताती हूँ कि उनमें क्या कमी है। परन्तु पश्चिम में ये देखना महत्वपूर्ण है कि यहाँ पर क्या कमियाँ हैं। अतः विवेक यह देखने में है कि हमारे अन्दर क्या कमियाँ आ गई हैं। हम कहाँ गलत हैं? हमारे अन्दर थोड़ा सा भी साहस है या नहीं?

उदाहरण के रूप में महिलाओं में बाहर साड़ी पहनने का साहस नहीं है, या पुरुष बाहर भारतीय वस्त्र नहीं पहनते, इसके लिए थोड़े से 'हँ' (साहस) की आवश्यकता है। इन वस्त्रों का उन्हें आनन्द आता है फिर भी वे ये वस्त्र नहीं पहनते। वही अटपटी, सुराखों वाली पैन्टें पहनते हैं। वे पंक लोगों वाली चीजें पहनते हैं परन्तु विवेक शील, अच्छे वस्त्र नहीं पहन पाते। ये (वस्त्र) ऐसी चीज है जो आपको बताती है कि हम कुछ भिन्न लोग हैं। ये लाल बिन्दी अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि बिन्दी लगाने के बाद भूत आपको नहीं पकड़ते। बिन्दी लगाई जानी चाहिए। बाइबल में लिखा हुआ है कि उनके सिर पर एक निशान होगा, परन्तु हरे रामा-हरे कृष्णा वालों की तरह से और भी बहुत से मूर्ख लोग हैं। मैं नहीं सोचती कि वे कोई चिन्ह धारण करेंगे। हम समाज से डरते हैं, बिन्दी कैसे लगाएं? परन्तु मान लो कि आपको कहा जाए कि बाल बिखेर कर घूमों, तो ये कार्य आप कर लेंगे क्योंकि समाज में इसकी स्वीकृति है।

हमें ऐसे लोग बनना है जिन्हें समाज का भय न हो। समाज के आडम्बरों से बाहर आकर हमें उन्हें सिखाना है कि जो अच्छे कार्य हैं हम उन्हें करेंगे चाहे आपको पसन्द हों या न हों। सन्त का यही चिन्ह है कहीं भी यदि आपने किसी सन्त को देखा है तो सत्य बताने के लिए उन्होंने पूरा प्रयत्न किया और बताया कि क्या करना है और किसका अनुसरण करना है। ये सन्त का चिन्ह है। अन्यथा आपके अन्दर का सन्त भी कभी-कभी समाज में विलीन हो जाता है, कभी सहजयोग में, कभी अन्यत्र। ऐसे सन्त का क्या लाभ है? आप मुझे किसी ऐसे सन्त का नाम बताएं जो समाज से न लड़ा हो, जिसने समाज की गलतियों को निर्भयता पूर्वक, स्पष्ट रूप से न बताया हो।

सहजयोगियों में साहस का होना अत्यन्त आवश्यक है। आप यदि विवेक विकसित कर लें तो ये कार्य हो जाता है। अहंग्रस्त होकर आप कैसा विवेक विकसित कर सकते है और किस प्रकार? दाईं ओर सभी देवता हैं, सभी देवी-देवता आपके आस-पास बैठे हुए हैं। इन देवी-देवताओं को समझना होगा। आपको ये ज्ञान प्राप्त करना होगा कि वे क्या करने वाले हैं। मान लो आप मार्ग में कहीं खो गए हैं। ऐसे में आपको आम लोगों की तरह से ये नहीं सोचना चाहिए कि ओह, "मैं रास्ते पर खो गया हूँ, मैं वहाँ कैसे

पहुँचूँगा? मैं क्या करुंगा?'' आप किसी बेकार के काम के लिए ही तो जा रहे हैं? कोई बात नहीं। परन्तु आपको अवश्य सोचना चाहिए कि 'क्यों' हनुमान जी मुझे यहाँ लाए, अवश्य वे मुझे यहाँ किसी उद्देश्य से लाए होंगे। आपको केवल देखना होगा।' इसे स्वीकार करें, **स्थिति को स्वीकार करें। स्थिति को जब आप स्वीकार कर लेते हैं तो आप देवी–देवताओं के हाथ में चले जाते हैं और वे आपका पथ प्रदर्शन कर रहे हैं।** आपके देवी–देवता इसे क्रियान्वित कर रहे हैं। इसे स्वीकार करें, यह स्वीकृति आपको अपने अहं पर शानदार विवेक प्रदान करेगी। जो भी कुछ गलत होता है, ठीक है, हम इसे स्वीकार करते हैं। और सर्वोपरि, आपने चैतन्य–लहरियों को भी देखना है। आप यदि कुछ करते हैं और चैतन्य–लहरियों का स्तर नीचे आने लगता है, तो निःसन्देह, 'मैं सहजयोगी हूँ, मेरे लिए चैतन्य–लहरियाँ और मेरी उत्क्रान्ति महत्वपूर्ण है।'' अतः दाईं ओर का विवेक विकसित करने के लिए आपको अपना ध्येय जानना होगा, अपना लक्ष्य जानना होगा। आपको समझना होगा, कि आप किस पथ पर खड़े हैं और आपको कहाँ लाया गया है? आज आप कहाँ हैं? हम अन्य लोगों की तरह से नहीं हैं, यदि आप इस प्रकार का विवेक विकसित कर लें, अपने अन्दर–शुद्धबुद्धि, क्योंकि यह शुद्धबुद्धि है, क्योंकि हँसा चक्र में शुद्धबुद्धि पूरे विश्व पर आरोहण करती है। इसे किसी चीज पर प्रभुत्व नहीं जमाना होता। ये यदि जल पर होती है तो झील को अत्यन्त सुन्दरता प्रदान करती है, उसे साधक पर प्रभुत्व जमाने की उसे विलय करने की आज्ञा नहीं देती। यह वह भाग है जहाँ वे 'हँ' हैं। वे यदि चाहेंगे तो इसमें डुबकी लगाएंगे और नहीं चाहेंगे तो नहीं लगाएंगे। वे सागर पर विहार कर रहे हैं, हँसा के सागर पर, अपने भव–सागर पर और वे इसमें डूबेंगे नहीं। ये इसका 'हँ' भाग है जिसका विवेक आपको होना चाहिए। एक ओर तो आपको चीज़ों को वैसे ही स्वीकार करना चाहिए जैसे वे आती हैं। इसका पहला उदाहरण श्रीकृष्ण थे जिनके पास सच्चा विवेक था। परन्तु आखिरकार वे श्रीकृष्ण थे। विवेक के उनके तरीके इतने रुचिकर थे कि ये जानने में आनन्द आता है कि किस प्रकार उन्होंने राक्षसों का संहार किया। हर बार उन्होंने सुदर्शन चक्र का उपयोग किया। जैसे एक राक्षस पांडवों को हराने का प्रयत्न कर रहा था, उन पांडवों को जो बहुत ही भले थे। श्रीकृष्ण ने कहा कि अब इस भयानक राक्षस का क्या करुं? इस राक्षस को ब्रह्मदेव, महादेव आदि सभी देवताओं से वर प्राप्त थे। बीच में होने के कारण श्रीकृष्ण उस राक्षस का संहार भली–भांति आयोजित करना चाहते थे। एक दाईं ओर के महान सन्त निद्रा मग्न थे। उन्हें वर प्राप्त था कि जब वे सोए हुए होंगे और कोई व्यक्ति यदि उन्हें जगा देगा तो उनकी दृष्टि मात्र से वह व्यक्ति नष्ट हो जाएगा। यही सन्त गुफा में सोए हुए थे। उस राक्षस से युद्ध करते हुए श्री कृष्ण उसके सामने युद्ध से भाग लिए, इसी कारण उनका नाम 'रणछोड़दास' पड़ा। वे जान– बूझकर वहाँ से भाग पड़े। श्रीकृष्ण इसलिए भागे क्योंकि इस भयानक राक्षस को मारने का और कोई तरीका ही नहीं था। श्री कृष्ण ने पीताम्बर पहना हुआ था। दौड़ते हुए वे उस महान सन्त की गुफा में आ गए और सोए हुए सन्त पर उन्होंने अपना पीताम्बर डाल दिया और स्वयं वहीं छिप गए। श्रीकृष्ण का पीछा करता हुआ राक्षस गुफा में आया, कहने लगा, ''युद्ध के मैदान से भागकर तुम थककर सो गए हो! खड़े हो जाओ। ज्यों ही उसने ऐसा कहा, सन्त की नींद टूट गई और उनकी दृष्टिमात्र से वह राक्षस भस्म हो गया।

अतः श्री कृष्ण अपने चरणों पर यदि विराट हैं, या अपने सिर पर यदि वे विटठ्ल हैं तो इन दोनों के बीच में हँसा चक्र है। श्री कृष्ण के जीवन में विवेक का बहुत सुन्दर वर्णन है। हम कह सकते हैं कि विवेक

का उपयोग करने के उनके बड़े शरारती तरीके थे। उन्होंने ऐसे बहुत से कार्य किए। परन्तु इस प्रकार उन्होंने नाटक किया, अपनी लीला की, क्योंकि वे लीलाधर थे इसलिए नाटक करने के लिए उन्होंने अपने विवेक का उपयोग किया। तो एक ओर तो विवेक प्रदान करने के लिए हमें श्रीकृष्ण की सहायता प्राप्त है और दूसरी ओर हमारे पास श्री ईसामसीह हैं और इन दोनों के बीच में हँसा चक्र स्थापित किया गया है। तो हमारे अन्दर दो महान अवतरण हैं जो विवेक की प्रतिमूर्तियाँ हैं। एक ओर श्री कृष्ण हैं जो हमारे बन्धनों (प्रतिअहं) को देखते हैं और दूसरी ओर ईसा–मसीह हैं जो हमारे अहं पक्ष को देखते हैं। उन्होंने सूली पर चढ़कर भी कहा, हे, परमात्मा, इन्हें क्षमा कर दो, क्योंकि ये अज्ञानी हैं। हे, 'परमात्मा इन्हें क्षमा कर दो क्योंकि ये नहीं जानते ये क्या कर रहे हैं।' ये वही ईसा–मसीह थे जो अपने हाथ में हण्टर लेकर परमात्मा के नाम पर पैसा बनाने वाले लोगों को पीटते थे। इस विवेक को देखें, सुदर्शन चक्रधारी श्रीकृष्ण जो हजारों हज़ार राक्षसों का वध करने में सक्षम थे, अर्जुन के सारथी बन गए। उनके व्यवहार का विरोधाभास उनके विवेक की अत्यन्त सुन्दर गाथा बन गई है।

सहजयोगियों के लिए आवश्यक है कि वे अपने विवेक को इस प्रकार कार्यान्वित करें कि उनमें अन्तर्बोध विकसित हो। मैं कहूंगी कि पहला विचार भी अन्तर्बोध हो सकता है, अन्तर्बोध हो सकता है। आजमाएं, प्रयोग करें। **परन्तु सहजयोग में किसी भी चीज की अति तक जाना गलत है, हमें हर कार्य सीमा में करना चाहिए।** जैसे मैंने इन्हें कहा कि हर चीज को चैतन्य पर देखो। तो ये हर चीज़ की ओर अपने हाथ फैला देते हैं, "मैं ये साड़ी खरीदूं कि नहीं खरीदूं?" इससे भी आगे चले जाते हैं, "मैं यह चेहरे का पाउडर खरीदूं कि नहीं खरीदूं?" ये हास्यास्पद है। ऐसा करना इतना बुरा है कि अन्ततः आप भूत बन जाते हैं और हर व्यक्ति को बता रहे होते हैं कि उसकी चैतन्य–लहरियाँ खराब हैं। आपका चित्त खराब है व्यर्थ की चीज़ों पर चित्त डालने से आपकी चैतन्य लहरियाँ पूर्णतः समाप्त हो सकती हैं। तो विवेक के साथ–साथ आपमें सहजबुद्धि, व्यवहारिकता भी होनी आवश्यक है। मैंने देखा है कि कुछ लोग अचानक किसी से भी सहजयोग की बातें करने लगते हैं। ऐसा करना व्यवहारिक नहीं है। सहजयोग 'बहुमूल्य रत्न' है, उसे आप सबको नहीं दे सकते। मैंने देखा है कि हवाई अड्डे पर भी लोग सबकी कुण्डलिनी उठा रहे होते हैं। नहीं, ऐसा नहीं करना चाहिए, साधकों को आना होगा और सहजयोग माँगना होगा। उन्हें इसकी याचना करनी होगी। केवल तभी उन्हें आत्म–साक्षात्कार मिल पाएगा। हमें बड़ी संख्या की नहीं उत्कृष्टता की आवश्यकता है। मेरे सारे प्रवचनों में, आपने देखा है कि मैं सहजयोगियों और साधकों की उत्कृष्टता पर बल देती हूँ। लेकिन जब हम श्रीमाताजी को वोट देने के लिए बहुसंख्या की बात सोचने लगते हैं तो इसके विषय में मुझे ये कहना है कि मैं कोई चुनाव नहीं लड़ने वाली हूँ। आप चाहे मुझे चुने या न चुने, मैं चुनी हुई हूँ। आपको ये कार्य नहीं करना। इसके लिए मुझे बहुत ज्यादा लोग नहीं चाहिएं। परन्तु जब आप विवेक के मामले के असफल हो जाते हैं तो मैं पाती हूँ कि कुछ समस्याएं खड़ी हो जाती हैं। अब आपको ये देखना है कि आपने कौन से विवेकहीन कार्य किए हैं, कहाँ गलती की है? किस प्रकार से आपने गलती की है? आपने स्वयं इसे खोजना है और गलती को दूर करना है। अन्यथा सहजयोग में कोई समस्या नहीं होनी चाहिए, कोई कठिनाईयाँ नहीं होनी चाहिए, केवल आनन्द, आनन्द और आनन्द ही होना चाहिए। विवेक यह पता लगाने में है कि आपकी दुर्बलताएं क्या हैं। आपने कहाँ गलती की, क्या गलत हुआ, कहाँ और

किस भाग में तथा किस प्रकार आप असफल हुए। कभी कभी लोग सोचते हैं, "उस समय हमने बहुत कार्य किया, अब हम नहीं कर सकते। तब आप असफल होते हैं। मैंने सुना है कि लोग कह रहे हैं कि हम यहाँ आए हैं अतः अब हम गुरु पूजा करने नहीं जाएंगे। ये बहुत गलत है। किसी भी कीमत पर आपको गुरु पूजा पर आना है। गुरु पूजा ऐसी पूजा है जिसे आप छोड़ नहीं सकते। सहस्रार पूजा को यदि आप छोड़ दें तो छोड़ दें परन्तु गुरु पूजा बहुत महत्वपूर्ण है। किसी भी कीमत पर आपको गुरु पूजा में आना है जो अंडोरा में है। ये हिमालय नहीं है। सहजयोग इतना आरामदेह है कि हम चाहते हैं कि हमें अपनी उड़ाने भी न बदलनी पड़ें। सीधे ही हम हँस पर बैठ जाएं और अंडोरा पहुँच जाएं। आप पहुँचेंगे, आप ये बात देखेंगे। परन्तु यदि आपमें सोचने की आदत बन जाती है, 'ओह, इसमें कठिनाई होगी,' तो कठिनाई होगी'। परन्तु जैसा वारेन ने कहा है यह सबसे सुगम होगा, सभी कुछ कार्यान्वित होगा, एक बार जब ऐसा सोचेंगे तो सभी कुछ कार्यान्वित होगा। परन्तु पहले कार्य को करने की शुद्ध इच्छा तो होनी चाहिए। जब भी आपके मस्तिष्क में ऐसे विचार आएं तो पुनः अपने विवेक का उपयोग करें। 'हम गुरु पूजा पर अपनी गहनता के लिए जाते हैं। यदि आपको याद है तो हर गुरु पूजा पर आपकी गहनता बढ़ी है। मैं कहती हूँ हर गुरु पूजा पर। निःसन्देह आप कहते हैं कि महाराष्ट्र यात्रा अच्छी है, मैं सहमत हूँ कि महाराष्ट्र यात्रा से आपको लाभ होता है। परन्तु ये यात्रा तीस दिन की है, इतनी गहन। गुरु पूजा केवल एक दिन की है। महाराष्ट्र यात्रा में आपको कितनी पूजाएं मिलती हैं? कम से कम आठ या नौ, कभी–कभी तो दस। इसीलिए इनका अधिक लाभदायक होना स्वाभाविक है। भारतीय लोग मुझे कहते हैं, 'श्रीमाताजी कम से कम एक बार तो हमें ये पूजा दे दीजिए। कोई अन्य नहीं, गुरु पूजा'। गुरु–पूजा के लिए हम कुछ भी करने को तैयार हैं, कृपा करके आ जाइए। इस बार वे गुरु पूजा चाहते हैं। कल्पना करें, भारत में आप गुरु पूजा में भाग न ले पाते। परन्तु अंडोरा में मेरा एक विशेष लक्ष्य है। अतः कृपा करके समझें कि मैं निरुद्देश्य व्यक्ति नहीं हूँ। शनैः–शनैः सीखें कि किस प्रकार मैं उद्देश्य पूरा करती हूँ– आपका, अपना और सहजयोग का, एक साथ। कितनी सुन्दरता पूर्वक मैं इसे कार्यान्वित करती हूँ! आप समझ जाएंगे। और मुझे आशा है कि एक दिन आप सब भी विवेक के सभी सुन्दर तरीके विकसित कर लेंगे जिनके द्वारा आप केवल ठीक कार्य करेंगे, कभी गलत कार्य नहीं करेंगे।

हँसा चक्र, जो शारीरिक पक्ष पर अधिक है, बाहर की ओर, इसे ठीक करने के लिए लोगों को शारीरिक पक्ष को भी काफी देखना पड़ेगा। अतः **हँसा चक्र को ठीक करने के लिए हमें नाक में घी आदि डालना पड़ेगा। हँसा चक्र को ठीक करने के लिए ये भी आवश्यक है कि चुम्बन आदि न करें।** मैं सोचती हूँ कि चुम्बन तो बिल्कुल छोड़ दिया जाना चाहिए क्योंकि चुम्बन से दूसरे व्यक्ति के कीटाणु प्रवेश कर जाते हैं। सहजयोग में ये ठीक है, परन्तु एक बार यदि मैं ऐसा कह दूँ तो इसका अर्थ ये नहीं है कि चुम्बन के मामले में पगला जाएं। भारत में यदि आप किसी को चूमें तो वो हैरान हो जाएगा! उसकी समझ में ही नहीं आएगा कि क्या हो रहा है। इन सब चेष्टाओं से जितनी अधिक प्रेम की अभिव्यक्ति आप करते हैं उतना ही कम प्रेम आपके हृदय में होता है। धन्यवाद देना भी एक तरीका है, पर आप कहते चले जाते हैं धन्यवाद, धन्यवाद, धन्यवाद, धन्यवाद। ये सब जुबानी जमा–खर्च है। बहुत से देशों के लोग धन्यवाद कहते ही नहीं। अन्दर से वे अति कृतज्ञ होते हैं। हृदय की कृतज्ञता आवश्यक गहनता का सृजन करती है। अतः अपने विवेक में किसी भी चीज़ को सतही रूप से

करने से बचना चाहिए। परन्तु अति से बचना, बाह्य अभिव्यक्ति से बहुत ज्यादा बचना, बाह्य अभिव्यक्ति से बहुत ज्यादा बचना, एक अन्य अविवेक को जन्म दे सकता है। जैसे अंग्रेज। वे बोलते ही नहीं, वे बिल्कुल नहीं बोलते। आप रोज उनके साथ पच्चीस मील यात्रा करें, उनके साथ बैठें, परन्तु वे आपसे से नहीं पूछेंगे कि आप कौन हैं? उनसे बोलने की आशा नहीं की जा सकती। ये सब बनावटी है।

अतः दूसरी बात जो हमें अपनानी है वह ये है **कि हमें बनावटी नहीं बनना।** ठीक है कोई व्यक्ति यदि हृदय से मुझे प्रेम करना चाहता है या गले लगता है तो ठीक है। इसमें कोई बनावट नहीं है। बच्चे अत्यन्त स्वाभाविक होते हैं, उनमें बनावट नहीं होती। उनमें बिल्कुल बनावट नहीं होती। इसी प्रकार से हमें भी हर चीज् के विषय में अत्यन्त स्वाभाविक होना होगा। बातचीत करते हुए यदि पुरुष दूसरे पुरुषों को थोड़ी बहुत चोट भी पहुँचाएं तो कोई बात नहीं है। इससे उनका अपमान नहीं होता। यह प्रेम की अभिव्यक्ति है। परन्तु ये सब नैसर्गिक होना चाहिए, बनावटी नहीं। सहजयोग में हमें बनावटीपन को नहीं अपनाना, किसी भी प्रकार से नहीं। परन्तु कपड़े पहनना बनावट नहीं हैं। भद्र होना बनावट नहीं है। गौरवशाली होना बनावट नहीं है। बनावट तो उस बात को कहना है जिसे आप अन्दर महसूस नहीं करते। ये बनावट है। परन्तु सहजयोगी में वह लज्जा, वह शर्म, वह मर्यादा होती है और वह अपने शरीर का सम्मान करता है। शरीर के सम्मान के कारण वह ऐसा कुछ नहीं करना चाहता जिससे शरीर का अपमान हो। और इस प्रकार आप जान जाते हैं कि किस सीमा तक जाना है और कहाँ तक नहीं।

सहजयोग में अविवेक का एक और तरीका भी है, मैंने देखा है कि **लोग मुझे बहुत प्रकार से उपयोग करने लगते हैं।** मान लो कोई व्यक्ति कविता लिख रहा है, वह मेरे पास आकर कहेगा कृपा करके मेरी कविता की त्रुटियाँ सुधार दीजिए। मैं एक कविता ठीक करुंगी, दो करुंगी, तीन करुंगी, दस कविताएं ठीक करुंगी, और फिर उसमें कविताएं लिखने की शक्ति समाप्त हो जाएंगी। इस प्रकार से **अपने स्वार्थ के लिए आपको मेरा उपयोग नहीं करना चाहिए,** परन्तु आप किसी न किसी ढंग से मेरा उपयोग कर रहे हैं। **इस सूझ–बूझ के साथ कि "श्रीमाताजी हर समय मेरे साथ हैं, और मेरी सहायता कर रही है, "आपको उछलकर मेरे पास आगे आने की, मेरा समय बर्बाद करने की, और मुझे परेशान करने की कोई जरूरत नहीं है, कि मुझे ऐसा लगे कि 'हे परमात्मा, कब मुझे इससे छुटकारा मिलेगा?'** कुछ लोगों में ये भी बात है, 'श्रीमाताजी आप मेरे घर पर अवश्य आइए, मेरे बच्चे को उठाइए, मेरे पति से मिलिए, चाहे वह शराबी ही क्यों न हो। 'मेरा अपना' कहे जाने वाले किसी व्यक्ति या चीज् पर चित्त ले जाना भी अविवेक है। मेरा चित्त अपने पर ले जाने की अपेक्षा आप अपना चित्त मुझ पर डालें। विवेक की ये अत्यन्त सूक्ष्म रेखा है, मानो तलवार की धार पर चलना, यह विवेक की अत्यन्त–अत्यन्त सूक्ष्म रेखा है। परन्तु एक बार जब विवेक की इस अवस्था (State) को आप अपने अन्दर जान जाते हैं तो आप विवेकमय हैं, और फिर चाहने पर भी आप विवेकहीन नहीं बन सकते। और यही उत्थान है। एक बार जब आप इस चक्र से निकलकर आज्ञा चक्र को पार करते हैं तो सहस्रार में प्रवेश कर जाते हैं जहाँ आपको विवेकमय होना पड़ता है। वहाँ से जो कुछ भी निकलता है वो आशीर्वादित होता है। वहाँ से जो भी अभिव्यक्ति निकलती है वह आशीर्वादित होती है। सहस्रार से निकलने वाली हर अभिव्यक्ति विवेकमय एवं सुन्दर होती है।

(शेष पृष्ठ 28 पर)

बोर्डी पूजा

परम पूज्य श्री माताजी का प्रवचन

बोर्डी 12.2.1984

वर्षत सकल मंगली ईश्वरीनष्ठांची मंदियाली अनवरत भूमंडला भेटतू भूतां।।
चला कल्पतरूचे आख चेतना चिन्तामणीचे गाव बोलते जे अर्णव पीयूषांचे।।
चन्द्रमे जे अलांछन मार्तन्ड जे तापहीन ते सर्वाही सदा सज्जन सोयरे होत।।
किंबहुना सर्व सुखी पूर्ण होउनि तिही लोकी भजिजो अदिपुरुखी अखंडित।।

अब मैं हिन्दी में आपको थोड़ा सा बताना चाहती हूँ कि सहजयोग में हम लोग अब ये नहीं जानते कि हमारे बारे में हज़ारों वर्ष से ये बताया गया था कि ऐसे महान् लोग संसार में आयेंगे और पहाड़ के पहाड़, बड़े-बड़े वृक्षों के ऐसे अरण्य संसार में घूमेंगे जो बोलते हुए, चलते हुए, दुनिया को उनकी इच्छाओं की पूर्ति के कल्पतरु जैसे उनको आशीर्वाद देंगे। और उनके एक-एक व्यक्ति में जैसे सागर उमड़ते हों, जिसमें अमृत बोलता हो ऐसे सागर। ऐसे सूरज होंगे- चमकते हुए सूरज कि जिसके अंदर कोई भी दाह नहीं, अग्नि नहीं, ऐसे चन्द्रमा जिसके ऊपर कोई कलंक नहीं।

ये आपके वर्णन लोगों ने किये। और तीन सौ वर्ष पहले ज्ञानेश्वर जी ने कि कितना आपका महत्व उन्होंने बताया। कितना महत्व कि कितना जरूरी है, सारी दुनिया के लिए एक आशा दी।

इस तरह से हो रहा है और हो गया। लेकिन अभी इसकी प्रगति मेरे विचार से बहुत, बहुत धीमी; इसकी प्रगति बहुत धीमी है। प्रगति आपकी वजह से धीमी हो जाती है। ऐसी जगह चित्त अपना जाता है जहाँ हम अपने को गिरा लेते हैं।

अपना चित्त, इस पेड़ का जैसा पृथ्वी से पूरी तरह से निघड़ित है, ऐसा आपको अपनी माँ के साथ निघड़ित रखना चाहिए। और उसकी जो ऊँचाई है उसके ओर दृष्टि रखनी चाहिये। ये ऊँचाई जो भी इन्होंने हासिल की है, तो इस वातावरण से लड़ कर, झगड़ कर, बाहर आकर, सर ऊँचा उठाकर की है। और जो लोग अपना सर दुनियाई चीजों के लिये, कृत्रिम चीजों के लिए, बाह्य चीजों के लिये झुका लेते हैं, तो कैसे उठ सकते हैं? या जो अपना चित्त इस धरती माँ से हटा लेते हैं, वो तो मर ही जाएंगे।

इसलिये हर सहजयोगी का ये 'कर्तव्य' है- ये पूरी तरह से कर्तव्य है- कि वो जाने कि सारी दुनिया आपकी तरफ आँख लगाए बैठी हुई है और आप अपने गौरव को पहचानें।

आप लोग यहाँ मुझे वचन देने आए हैं, इस International Seminar (अन्तरराष्ट्रीय गोष्ठी) में कि "माँ जितनी तुम मेहनत करती हो, उसी तरह से हम भी मेहनत करेंगे।"

उस शान्तिमय गौरव में आप अपने को ऊँचा उठाइये। अपने बारे में पूरी आपको कल्पना होनी चाहिये, कि आप हैं क्या !.... आप सबसे यही विनती है कि कृपया अपनी ओर नज़र करें। आप सब सिंहासन पर बैठिए, उस सिंहासन को पाइये, उसके जैसे होइये। दुनिया के मुकाबले में आप बहुत बड़ी चीज हैं।

अनन्त आशीर्वाद

(निर्मलायोग-1984)

सहजयोग और शारीरिक चिकित्सा -2

अस्थमा :- यह बाईं ओर का रोग है जिसमें फेफड़े शिथिल हो जाने के कारण श्वास लेने में कठिनाई होती है। असुरक्षा की भावना या पिता से सम्बन्ध ठीक न होना इस रोग के मूल कारण हो सकते हैं। इसके कारण मध्य या दायाँ हृदय (क्रमानुसार) प्रभावित होते हैं। ऐसी स्थिति में श्वेत रक्त कोषाणुओं (W.B.C.) की संख्या लाल रक्त कोषाणुओं (R.B.C.) की अपेक्षा बढ़ जाती है। बाईं नाभि और स्वाधिष्ठान की पकड़ इसका कारण होती है।

तपेदिक :- ये रोग भी बाईं ओर की समस्या है और कुपोषण, भोजन में प्रोटीन की कमी तथा बाईं ओर की कुछ अन्य समस्याओं के कारण होता है। बाईं नाभि, स्वाधिष्ठान तथा मध्य हृदय प्रभावित होते हैं। उपरोक्त दोनों रोगों से पीड़ित रोगियों को अपनी दाईं ओर उठाकर बाईं ओर को चैतन्यित करना चाहिए और बायाँ हाथ श्री माताजी की ओर तथा दायाँ हाथ पृथ्वी की ओर करके पानी पैर क्रिया करना चाहिए। पौष्टिक भोजन करना चाहिए और प्रभावित चक्रों को चैतन्य देना चाहिए।

सर्दी जुकाम:- बाईं या दाईं विशुद्धि की पकड़ इस रोग का कारण होती है। हँसा चक्र भी प्रभावित हो जाता है। यदि बाईं विशुद्धि की पकड़ हो तो नाक बन्द हो जाता है और यदि दाईं विशुद्धि की पकड़ हो तो नाक बहता रहता है। नाक यदि बहता है तो इसे ठीक करने के लिए कच्चे कोयले के अंगारे पर अजवायन डालकर उसकी धूनी लेनी चाहिए। तुलसी के पत्ते, अजवायन, अदरक, और चीनी का काढ़ा पीकर बिस्तर में आराम करना चाहिए। नाक यदि बन्द हो तो नाक में कपूर मिला हुआ शुद्ध घी डालना चाहिए।

फेफड़ों और गले की समस्याओं से बचने के लिए स्नान आदि के बारे में धारणाएं बदलना आवश्यक है। गर्मियों में ठण्डे पानी से स्नान करना चाहिए और सर्दियों में गुनगुने पानी से। परन्तु गुनगुने पानी से स्नान करने के बाद कुछ देर सर्दी में बाहर नहीं निकलना चाहिए।

पीलिया रोग :- इस रोग में दाईं नाभि और स्वाधिष्ठान प्रभावित होते हैं। हमारी परम प्रिय श्री माताजी ने इस रोग, (जिसे ठीक करना चिकित्सक लोगों के लिए कठिन होता है) से मुक्ति पाने के लिए बहुत ही आसान दवाई बताई है। ताजी मूली के पत्ते उबालकर उसमें मिश्री मिलाकर, मूली के पत्तों का ये उबला हुआ पानी तीन दिन तक सादे पानी के स्थान पर पीना चाहिए। तले हुए पदार्थ, प्रोटीन आदि से बचना चाहिए। ऐसा करने पर ये बीमारी तीन दिन में ठीक हो जाएगी। बायाँ हाथ ज़िगर पर रखकर तथा दायाँ हाथ श्रीमाताजी की फोटो की ओर करके हृदय पूर्वक दस बार आदिगुरुदत्तात्रेय का मन्त्र लेना चाहिए।

शक्कर रोग :- इस रोग में दाईं नाभि और स्वाधिष्ठान प्रभावित होते हैं। ध्यान करते हुए बाईं ओर 108 बार ऊपर को उठाकर दाईं ओर को नीचे को गिराना चाहिए और इस प्रकार दाएं पक्ष को चैतन्य देना चाहिए। अग्न्याशय पर दायाँ हाथ रखकर गुनगुने पानी में नमक डालकर पानी पैर क्रिया करना चाहिए। शक्कर रोग से पीड़ित साधकों को पर्याप्त मात्रा में चैतन्यित नमक लेना चाहिए तथा श्री माताजी की फोटो के सम्मुख बैठकर मन्त्र कहना चाहिए, *'श्रीमाताजी मैं स्वयं का गुरु हूँ''* ये मन्त्र दस बार उच्चारण करना चाहिए। भविष्य की योजनाएं बनानी छोड़ देनी चाहिए।

अनिद्रा :- दाईं ओर की अत्यधिक गतिशीलता के कारण ये रोग होता है। बाईं ओर को

उठाकर दाईं ओर नीचे को गिरानी चाहिए तथा उसे चैतन्य दिया जाना चाहिए। निम्नलिखित मन्त्र का उच्चारण किया जाना चाहिए:

या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता,
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः।

दुर्बल स्मरण शक्ति :- बाईं ओर को उठाकर दाईं ओर नीचे गिराई जानी चाहिए और उसे चैतन्य प्रदान करना चाहिए। निम्नलिखित मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए:

या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः।

स्पोन्डिलाइटिस (Spondylitis):- ये रोग बाएं या दाएं अनुकम्पी नाड़ी तन्त्र के कारण हो सकता है, कुपोषण, बहुत अधिक कार्य, अपनी जिम्मेदारियों के प्रति बहुत अधिक उत्सुकता या बेचैनी भी इसका कारण बनती है। अनुकम्पी नाड़ी तन्त्र का सन्तुलन ठीक किया जाना चाहिए और चैतन्य देकर, चैतन्यित मिट्टी के तेल से मालिश द्वारा तथा गुनगुने पानी में पानी-पैर क्रिया द्वारा प्रभावित अंगों को रोग मुक्त किया जाना चाहिए।

गृध्रसी (Sciatica):- ये बायें अनुकम्पी का रोग है। बाईं नाभि और स्वाधिष्ठान प्रभावित होते हैं। बायें अनुकम्पी को चैतन्य देकर तथा प्रभावित चक्रों के अवयवों की चैतन्यित मिट्टी के तेल से मालिश करके चैतन्य देकर उनका इलाज किया जाना चाहिए।

निर्मला योग- 1983
(रूपान्तरित)

(पृष्ठ 25 का शेष भाग)

कुछ लोगों में मुझ पर रौब जमाने की आदत भी होती है। जैसे मैं जब बोल रही होती हूँ तो वे बीच में बोल पड़ते हैं। मैं यदि कुछ कर रही हूँ तो वे आगे आ जाएंगे। तब मैं खेल करती हूँ। चालाकी करने में मैं बहुत कुशल हूँ, परन्तु मैं बहुत विवेकशील भी हूँ। तो यह ठीक है। मेरा विवेक चालाकी करता है, क्योंकि सीधे से अगर मैं चालाकी करुंगी तो आपको अच्छा नहीं लगेगा। अतः बेहतर होगा कि विवेकमय होकर चालाकी की जाए। जो भी कार्य हम करते हैं उसमें विवेक अपनी अभिव्यक्ति करता है। और यदि आप पक्के सहजयोगी या सहजयोगिनी हैं, आप विवेक-कुशल हैं, तो सभी लोग इसे देखते हैं, इसके बारे में जानते हैं कि यह विवेक है। अतः आप सब लोगों के **लिए आवश्यक है कि आज अपना विवेक विकसित करें और मुझसे अपने हँसा चक्र में विराजने की प्रार्थना करें ताकि हर समय आप अपने विवेक की शक्ति में स्थापित हो सकें।** विवेक के कारण ही हम मानव अवस्था तक विकसित हुए हैं और आगे जाने के लिए हमें अपना अन्तर्जात विवेक विकसित करना होगा। मेरे विचार से यही विवेक सारे धर्मों का सार तत्व है। अब तक किए गए हमारे सारे प्रयत्न, हमारे सभी पूर्वजन्म, सभी कुछ इसी विवेक के चहुँ और घूमते हैं।

परमात्मा आप पर कृपा करें।

श्रीमाताजी ध्यान में चली जाती हैं।

विवेक के विषय में बहुत कुछ कहा जा सकता है, कहने का अभिप्राय ये है कि ये अनन्त है। इसके विषय में मैं कहाँ तक कहूँ? अपने सभी निर्णयों में, सभी कार्यों में आपको विवेकमय होना है। ये दिव्य विवेक है। विवेक के विषय में बहुत कुछ कहा जा सकता है इसका कोई अन्त नहीं है। जैसा आप जानते हैं, भ्रम के इन दिनों में यही विवेक हमें सही दिशा में ले जाएगा। अतः हमारे सभी निर्णयों में, छोटी-बड़ी चीज़ों को समझने में, सर्वत्र, विवेक अत्यन्त महत्वपूर्ण है- विवेक जो परमेश्वरी सूझ-बूझ है जिसे हमने प्राप्त करना है।

परमात्मा आपको धन्य करें।

(रूपान्तरित)

आत्मा

परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी का प्रवचन
निर्मला योग- 1983 से उद्धृत

हमारे अन्दर आत्मा बहुमूल्यतम निधि है। आत्मा के मूल्य को मापा नहीं जा सकता, इसीलिए इसे शाश्वत मूल्यवान कहा जाता है, क्योंकि ये असीम है, हम इसे माप नहीं सकते।

हम कहते हैं कि सर्वशक्तिमान परमात्मा सत्-चित्त-आनन्द है। सत् अर्थात सत्य। मानव की परिभाषा में सत्य का जो अर्थ हम समझते हैं, प्रासंगिक (Relative) है। परन्तु जिस 'सत्य' के विषय में मैं आपसे बता रही हूँ, वह पूर्ण (Absolute) है, जहाँ से सभी सम्बन्ध आरम्भ होते हैं। इसे समझने के लिए मैं आपको एक उदाहरण दूंगी। पृथ्वी पर सागर, नदियाँ तथा सभी रूपों में जल है, आप ये कह सकते हैं। परन्तु इन सबको पृथ्वी ने अपने अन्दर संजोया (Enveloped) हुआ है। पृथ्वी माँ यदि न होतीं तो इनमें से किसी का भी अस्तित्व न होता। अतः हम कह सकते हैं कि पृथ्वी पर विद्यमान सभी चीज़ों का आधार पृथ्वी माँ हैं। वे हमें संजोए (Enveloping) हुए हैं। सूक्ष्म अणुओं, विशाल पर्वतों में उनका अस्तित्व है, उनका अस्तित्व है क्योंकि तत्व (Element) पृथ्वी का ही अंश हैं। सर्वशक्तिमान परमात्मा भी ऐसे ही हैं। 'सत्' नामक उनका अंश, सृजित हुई या असृजित (created or not created) सभी चीज़ों का आधार है। एक अन्य उदाहरण को समझने का प्रयत्न करें। 'सत' किस प्रकार 'पुरुष' है, किस प्रकार परमात्मा है जो सृजन कार्य में वास्तव में भाग नहीं लेता, यह मात्र उत्प्रेरक (catalyst) है। उदाहरण इस प्रकार हो सकता है जैसे मैं सारा कार्य कर रही हूँ, हर चीज़ का सृजन कर रही हूँ परन्तु मेरे हाथ में प्रकाश है। इस प्रकाश के बिना मैं कुछ नहीं कर सकती। प्रकाश मेरे कार्य का आधाार (Support) है। परन्तु जो भी कार्य मैं कर रही हूँ उसमें प्रकाश कुछ भी नहीं करता। इसी प्रकार से सर्वशक्तिमान परमात्मा भी प्रकाश की तरह से साक्षी-मात्र हैं।

परन्तु 'चित्त' उनका दूसरा गुण है। यह चित्त है। इसमें जब स्फुरण (Pulsation) होता है या परमात्मा का 'चित्त' जब स्फुरित होता है तो अपने चित्त के माध्यम से वे सृजन करने लगते हैं।

उनका (परमात्मा) तीसरा गुण 'आनन्द' है। आनन्द अर्थात आनन्द का भाव जो उन्हें अपने बोध, अपने सृजन से प्राप्त होता है। ये तीनों गुण 'सत्-चित्त-आनन्द' जब परस्पर मिलते हैं और शून्य बिन्दु (zero point) पर होते हैं, तब ये ब्रह्म-तत्व बन जाते हैं। जब ये तीनों गुण एकरूप हो जाते हैं, जहाँ पूर्ण मौन (Silence) होता है, तो न तो कोई सृजन होता है और न ही कोई अभिव्यक्ति। केवल आनन्द होता है जो चित्त के साथ एकरूप है क्योंकि आनन्द से एकरूप होने के लिए चित्त उस तक पहुँच गया है और आनन्द का तादात्म्य सत्य से हो गया है। तीनों गुणों का संयोजन जब समाप्त होता है (सत्-चित्त-आनन्द जब अलग होते हैं) तो तीन प्रकार के तत्वों का सृजन होता है। अन्तस में 'आनन्द' उनकी (परमात्मा) सृष्टि और 'सत्य' में विलय हो जाता है। आनन्द जब सृजन के साथ चलने लगता है तो सृष्टि 'सत्' से 'असत्' की ओर, 'माया' की ओर चल पड़ती है। उस समय सृष्टि कार्यान्वित होने लगती है और जब ये कार्यान्वित होने लगती है तो आनन्द जो कि बाएं पक्ष में है, परमात्मा के भावनात्मक पक्ष में, वह भी स्थूल से स्थूलतर होता चला जाता है। जब तक मनुष्य उस अवस्था तक नहीं पहुँच जाते जहाँ तमोगुण का पूर्ण अन्धकार है, जहाँ, 'सृजनात्मकता' का पूर्ण अन्त है और 'आनन्द' की पूर्ण सुप्तावस्था। क्या ये

बात स्पष्ट है? अब आप महालक्ष्मी, महाकाली और महासरस्वती को समझेंगे। इसीलिए ईसामसीह ने कहा था, "मैं ही प्रकाश हूँ।" क्योंकि वे 'सत्' के प्रतिनिधि हैं- परमात्मा के प्रकाश के। और परमात्मा का प्रकाश जब पूर्णत: स्थूल, सुप्त या मृत हो जाता है तो यह सृजन की दूसरी अवस्था पर पहुँचता है। ये सभी चीजें गहन से गहनतर होती चली जाती हैं और स्थूल बन जाती हैं। दृष्टान्त का यह एक भाग है।

अब जब आप सर्वशक्तिमान परमात्मा को पुन: प्राप्त कर रहे हैं तो यह दृष्टान्त का दूसरा भाग है। यह प्रक्रिया शनै: शनै: उच्चतर, सूक्ष्मतर और उत्कृष्टतर होती चली जाती है। परिष्कृत होने की इस क्रिया में अन्तत: प्रकाश उत्क्रान्ति के लिए कार्य करता है। शनै: शनै: स्थूल भाग ज्योतिर्मय होने लगते हैं। आप देखते हैं कि छोटे जीव-जन्तुओं में इतना प्रकाश (बोध) नहीं होता जितना बड़े पशुओं में होता है। धीरे-धीरे-आनन्द भी सूक्ष्म से सूक्ष्मतर होने लगता है। हम इसे सुन्दर कह सकते हैं। मानव का आनन्द, पशुओं के आनन्द की अपेक्षा कहीं अधिक सुन्दर होता है। तो आनन्द की अभिव्यक्ति भी परिवर्तित होने लगती है। अर्थात आपके आनन्द का दायरा बढ़ता चला जाता है और आपके हाथों में पहुँच जाता है। उदाहरण के रूप में कुत्ते के लिए सौन्दर्य का कोई अर्थ नहीं है, भद्रता का कोई अर्थ नहीं है। अत: मानव अवस्था पर पहुँचने तक, उस सीमा तक, आप अपना 'सत्' जो कि चेतना है, उस सीमा तक अपना आनन्द तथा सृजनात्मक क्रिया को भी विकसित करते हैं। अब आप देखिए कि किस प्रकार परमात्मा की 'सृजनात्मकता' मानव के हाथों में आती है, अवस्था परिवर्तन के साथ किस प्रकार परमात्मा का आनन्द मानव के हाथ आता है और किस प्रकार परमात्मा का 'प्रकाश' आत्मा के रूप में मानव के हृदय में आता है।

ये बहुत सुन्दर है। मैंने इसको छुआ मात्र है। जब आप मानव बनते हैं, लोग कहते हैं कि मानव में आत्मा होती है, परन्तु इसका अर्थ ये नहीं कि अन्य प्राणियों में नहीं होती, परन्तु केवल मनुष्य में ही प्रकाश दीप जलने लगता है।

उसी 'प्रकाश' के कारण हम धर्म की बात करते हैं, परमात्मा की बात करते हैं और शाश्वत तत्वों की बात करते हैं। परन्तु वास्तव में यह अत्यन्त अनिश्चित अवस्था है-मानव होना। परन्तु उस अवस्था में आपको थोड़ा सा उस ओर उछलना होता है, परन्तु कभी आप इधर-उछलते हैं, कभी उधर। क्योंकि यह छलांग तब तक सम्भव नहीं है जब तक चेतना उस अवस्था तक नहीं पहुँच जाती जहाँ आप स्वतन्त्र हो जाते हैं और उस स्वतन्त्रता में आप अपना मार्ग खोज नहीं लेते। ये स्थिति है क्योंकि आपकी आत्मा (self) आपकी अपनी तब तक नहीं हो सकती, जब तक आप स्वतन्त्र नहीं हैं। जब तक आप दास हैं या पाश में बंधे हुए हैं, या स्थूल अवस्था में हैं आप किस प्रकार अपने अन्त:स्थित शाश्वत आनन्द का आनन्द उठा सकते हैं? अपनी आत्मा (self) को अधिक से अधिक उघाड़ कर और अधिक सूक्ष्म और स्वच्छ बनकर ताकि आप परमात्मा को महसूस कर सकें। उस आनन्द के प्रति स्वयं को अनावृत करना आप पर निर्भर करता है।

एक बार जब आप इस तथ्य को जान जाएंगे कि आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करने के पश्चात् जब तक इन तीनों तत्वों (सत्-चित्त-आनन्द) में संयोजन नहीं होने लगता, आप ये नहीं महसूस कर सकते कि आपने स्वयं को स्थापित कर लिया है। अपने अन्त:स्थित आनन्द को चेतना के माध्यम से महसूस करना होगा, अन्यथा आप इसे देख नहीं सकते। मान लो आपमें आँखे नहीं हैं तो आप किस

प्रकार देख सकते हैं? मुझे देखने की चेतना यदि आपमें न होती तो आप मुझे कैसे देखते? मुझे सुनने का बोध यदि आपमें न होता तो किस प्रकार आप मुझे समझ पाते। एक बार जब वह चेतना आपमें आ जाती है केवल तभी वह आनन्द आपमें जागृत होता है। चेतना के सूक्ष्मभाव के माध्यम से ही आप आनन्द को आत्मसात करने वाले हैं। अभी आपने महसूस किया, और आपने कहा, ''कितनी सुन्दर चीज़ है।'' आपको बहुत प्रसन्नता हुई। इस अवस्था पर आप सृजन का आनन्द महसूस कर रहे हैं और मानव तो सृजन की पराकाष्ठा है। परन्तु 'शिखर' (crown) भाग अत्यन्त छोटी सी चीज़ है। बहुत छोटी सी चीज़। तत्क्षण यह थोड़ी सी दूरी को पार करता है, केवल इन तीनों तत्वों (सत्-चित्त-आनन्द) का संयोजन होना चाहिए। इसी कारण से आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करने के पश्चात् भी आपको लगता है कि आप उस शक्ति (Silence) को महसूस नहीं कर पाते। क्योंकि आप 'प्रकाश' नहीं बने, आप 'आनन्द' को महसूस नहीं करते क्योंकि आप आनन्द नहीं बने। ये आपका बायाँ पक्ष है। हर चीज़ में आनन्द है। मानव रूप में आप प्रतिकृतियों (patterns) में आनन्द देखने लगते हैं। आप एक पिटारा देखते हैं, इसे खोलते हैं। इसमें आपको प्रतिकृति दिखाई देती है। आप इसे मुल्लमा कहते हैं चीज़ों के खुरदरेपन, उनकी कोमलता और सामंजस्य की बात आप करते हैं। आप पदार्थों को, परमात्मा की सृष्टि के आनन्द को महसूस करने लगते हैं। परन्तु आत्मसाक्षात्कार के पश्चात् आप सृष्टि के आनन्द को महसूस करने लगते हैं।

मानव ही सृजन की पराकाष्ठा है, इसलिए सहजयोगी को महसूस करना चाहिए कि यदि वह किसी निम्नस्तर के व्यक्ति से मित्रता करने का या उससे लिप्त होने का प्रयत्न करता है तो उस व्यक्ति से उसे आनन्द कभी नहीं प्राप्त हो सकता। वह केवल इतना कर सकता है कि उस व्यक्ति को अपनी बुलंदियों के स्तर तक उठाए और जो आनन्द आपको प्राप्त हो रहा है उसे भी वह आनन्द महसूस करवाए। मान लो कोई कलाकार किसी अन्धी लड़की से विवाह करता है! क्या लाभ है? वह लड़की इस व्यक्ति द्वारा सृजित कला का आनन्द नहीं ले सकती। इसी प्रकार से यदि आप अपने परिवार के लोगों में, अपने सम्बन्धियों में, मित्रों में दिलचस्पी लेते हैं तो पहला और सर्वोत्तम कार्य जो आप कर सकते हैं वह है उन्हें आत्मसाक्षात्कार देना अर्थात अपनी आत्मा का 'आनन्द' देना।

उनकी आत्मा के आनन्द के द्वार उनके लिए खोल दें, यही बहुमूल्यतम चीज़ है। यही कारण है कि लोग फड़फड़ाते हैं, समय नष्ट करते हैं और परेशानी का एहसास उन्हें होता है। छोटी-छोटी चीज़ों के लिए आसानी से वो अपने आनन्द का अन्त कर लेते हैं।

आपके सम्मुख यह सागर की तरह से है, जहाँ मैं हूँ और मैं चाहती हूँ कि आप सब इसमें आएं और आनन्द उठाएं। आपके लिए यही काफ़ी है। आपके आनन्द के लिए ही सारा सृजन किया गया था। आपको सूक्ष्म से सूक्ष्मतर बनना होगा। परन्तु आप तो अत्यन्त स्थूल चीज़ों पर अपना बहुत सा समय बरबाद कर रहे हैं!

परमात्मा आपको धन्य करें।

निर्मला योग-1983
(अनुवादित)

परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी का परामर्श

हैम्पस्टैड टाऊन हॉल (इंग्लैण्ड) 31.03.83

परमात्मा का कार्य और नकारात्मकता

मुझे लगता है कि परमात्मा के नज़रिए से जब भी कोई कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है तो सारी नकारात्मक शक्तियाँ इस दिव्य कार्य में विलम्ब करवाने के लिए, इसमें विघ्न डालने के लिए तथा इसका पथ परिवर्तन करने के लिए अपनी योजनाओं को कार्यान्वित करने लगती हैं। यह अत्यन्त आश्चर्य की बात है। आज बेहतर होगा कि मैं आपको परमात्मा की इच्छा के विषय में बताऊं और ये भी कि किस प्रकार हम मानव हर समय इसके विरुद्ध जाने का प्रयत्न करते हैं।

परमात्मा की इच्छा अत्यन्त सहज है। उनका प्रेम दिव्य है, वे करुणामय हैं और दया के सागर हैं। उन्होंने इस विश्व का सृजन किया और उसके बाद मानव का सृजन किया ताकि वे उसे जीवन की उच्चतम चीज़ 'आनन्द' प्रदान कर सकें। आनन्द, जो कि अत्यन्त सहज गुण है, में उधार ली गई प्रसन्नता की तरह से दोहरापन (Duality) नहीं होता। परन्तु किस प्रकार हम परमात्मा-विरोधी और आनन्द-विरोधी हैं तथा ऐसा क्यों होता है?

हमारी चेतना, जैसे आप जानते हैं, हमारे मस्तिष्क के माध्यम से नीचे की ओर (अधोगति) बढ़ती हैं और अधोगति की ओर जाते हुए ये हमें परमात्मा से दूर ले जाती है। परमात्मा को प्राप्त करना हमारा अन्तिम लक्ष्य है। परन्तु सर्वप्रथम हम परमात्मा से तादात्मय की चेतना से थोड़ा दूर जाते हैं, केवल ये समझने के लिए कि स्वतन्त्रता का उचित उपयोग होना चाहिए। इस प्रशिक्षण के बिना, इस शिक्षा के बिना मानव को स्वतन्त्रता देना व्यर्थ है। आपने स्वतन्त्र देशों को देखा है। अपनी स्वतन्त्रता में उन्होंने क्या प्राप्त किया है? अपनी हत्या करने के लिए एटम बम! यह मूर्खता है, जाहिलपन है, निरर्थक है। परन्तु हमने ऐसा किया है। हमें इस पर गर्व है और इसे अधिक बिगाड़ने पर और अपनी स्थिति को और खराब करने पर हम लगे हुए हैं। इस प्रकार से हम चलते हैं। जो चेतना हमारी अपनी थी, मानवीय चेतना, वह हमारी स्वतन्त्रता को परखने के लिए, उस पर प्रयोग करने के लिए, हमें दी गई थी। इसके द्वारा हम आत्मा बन जाते हैं।

आखिरकार आपने आत्मा बनना है। परन्तु जब हम अपनी तथाकथित चेतना में उन्नत होने लगते हैं तो मात्र, 'आत्मा' ही हमारी चिन्ता नहीं रह जाती। मैं कहूंगी कि **हम उस वृक्ष की तरह से हैं जो खड़े होने और उन्नत होने के लिए अपनी जड़ें पृथ्वी में उतारता है।** इसी प्रकार से हमारी जड़ें भी हमारे मस्तिष्क में हैं। और फिर हम पत्ते निकलने, फूल खिलने और फल बनने तक ऊपर उठते चले जाते हैं। परन्तु इसके विपरीत फल की अवस्था तक पहुँचने से पहले हम बनावटी पत्तों का सृजन करने और उनका आनन्द लेने लगते हैं! हम बनावट में फँस जाते हैं। एक बार जब हम इस बनावटीपन को अपनाने लगते हैं तब हम वास्तविकता से दूर हट कर नकारात्मक विचारों या परमात्मा-विरोधी सकारात्मक विचारों की अति की ओर बढ़ने लगते हैं क्योंकि इन्हीं विचारों के कारण हम एटम बम आदि बनाते हैं।

अत: वास्तव में दो शाखाएं हैं जिनमें हम बँट जाते हैं। कुछ लोग बाईं ओर को या नकारात्मक दृष्टिकोण की ओर जाना चाहते हैं। वे स्वयं को नष्ट करते हैं, स्वयं को कष्ट देते हैं और सभी ऐसे कार्य करते हैं जिनके कारण अत्यन्त दयनीय ढंग से उनकी मृत्यु होती है। उन्हें सभी प्रकार के रोग हो जाते हैं, वे अपने शरीर को कष्ट देते हैं। अपनी हर चीज़ को कष्ट देते हैं। दूसरा दायाँ पक्ष है। इसमें जानेवाले लोग अन्य लोगों को कष्ट देते हैं, उन्हें

नष्ट करते हैं, उन पर नियंत्रण करते हैं। दोनों ही मार्ग परमात्मा, उनकी दया और उनकी कृपा से दूर हैं। लक्ष्य केवल एक होना चाहिए-आत्मा, केवल तभी उचित दिशा की ओर बढ़ सकते हैं। परन्तु मानव इस लक्ष्य से आसानी से भटक जाते हैं क्योंकि ऐसा करने के लिए वे स्वतन्त्र हैं। अपने अहं के कारण वे इसे इस प्रकार तितर-बितर कर देते हैं कि जब आप लोग सुगम जीवनयापन के बनावटी रास्ते विकसित कर लेते हैं तो आपमें परमात्मा की चेतना ही लुप्त हो जाती है-कि परमात्मा का अस्तित्व है और वही पूरे विश्व को चला रहे हैं। अपने बारे में हम इतने चेतन हो जाते हैं कि हम सोचने लगते हैं कि 'कुछ भी गलत नहीं है।' उल्टे-सीधे कार्य कर करके हम स्वयं को सभी प्रकार की समस्याओं में फँसा लेते हैं। ये जो भी कुछ हम कर रहे हैं, ये हमारे विरोध में है, और हमारी आत्मा अर्थात 'परमात्मा', के भी क्योंकि परमात्मा ने हमारा सृजन किया है और हमें प्रेम करते हैं। हम स्वयं को प्रेम नहीं करते। यदि हमें स्वयं से प्रेम होता तो हम अपने शरीर, अपने तन्त्र और अपनी हर चीज़ का ये कहकर दुरुपयोग नहीं करते कि "क्या खराबी है? क्यों न ये कार्य किया जाए?" आपको अपने इस शरीर, अपने इस मस्तिष्क और इस समाज को प्रेम करना चाहिए। अपनी हर चीज़ से आपको प्रेम करना चाहिए क्योंकि अपने प्रेम के कारण परमात्मा ने आपका सृजन किया है। परन्तु प्रेम शब्द को ही अत्यन्त विकृत कर दिया गया है! क ने हैं असंयमित यौन सम्बन्धों में क्या बुराई है? क्या ये प्रेम है? मैं यदि आपसे कहूं कि ये प्रेम नहीं है क्योंकि यह प्रकृति के विरुद्ध है और आपको कष्ट देता है, इसके कारण आप समस्याओं में फँस जाएंगे। परन्तु लोग सोच सकते हैं कि ये महिला बुढ़िया गई हैं, पुराने फैशन की है या विक्टोरियन युग की है। सुनिए, ये सत्य है। क्यों हम ऐसे कार्य करते हैं जो हमें नष्ट कर दें? आप अपना सृजन नहीं कर सकते। शरीर की तो बात ही छोड़ दें आप अपने लिए एक गुलाब के फूल का सृजन नहीं कर सकते। फिर हमें आत्मविरोधी क्यों होना चाहिए? जिस समाज का हमने सृजन किया है, उस समाज का विरोधी हमें क्यों होना चाहिए? या जिस राष्ट्र या राष्ट्रों का हमने सृजन किया है उनके विरुद्ध हमें क्यों होना चाहिए? आज ये सब राजनीतिज्ञ क्या कर रहे हैं? परस्पर लड़ रहे हैं। किसलिए? इनकी ओर देखें। मैं समझ नहीं सकती कि ये सारी लड़ाई किस लिए है। और अधिक विनाशकारी शक्तियों का सृजन करने के लिए? अबोध मनुष्यों की हत्या करने के लिए, अधिक भयानक हथियार बनाने के लिए? जो अबोध हैं उन्हें केवल चेतावनी है, वो नहीं जानते कि वे क्या करें! उनकी समझ में नहीं आता कि कल उनकी हत्या क्यों हो जाएगी! केवल इसलिए कि कुछ लोगों के दिमाग फिर गए हैं? और ये सब विकृत मस्तिष्क के लोग सत्तारुढ़ हैं! इस प्रकार से हमारे अन्दर नकारात्मकता बढ़ती है। हम नकारात्मक हो जाते हैं। दोनों ही दृष्टिकोण नकारात्मक हैं क्योंकि ये परमात्मा को नकारते हैं।

पहला अपराध जो हमने किया, वह है परमात्मा को नकारना। हमें परमात्मा का भय नहीं है। वे करुणा हैं, दया हैं, सभी कुछ हैं। परन्तु अपनी करुणा में ही वे इस विश्व को नष्ट करने वाले हैं। अपने विरुद्ध और अधिक अपराध करने की आज्ञा वो नहीं देंगे। वैसे भी वो विनाश करते हैं। कैंसर (कर्क रोग) क्या है? हमारे शरीर में होने वाले ये सभी रोग क्या हैं? ये उन्हीं विनाशकारी शक्तियों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं जिनकी रचना हमने स्वयं अपने अन्दर की है। किसी भी बाह्य, किसी ग्रह या किसी भी प्रकार के सांसारिक आक्रमण का कोई भय नहीं है। नहीं, ऐसा कोई भय नहीं है। आक्रमण की रचना हमारे अपने अन्दर होती है और इसका ज्ञान हमें होना चाहिए। स्वतन्त्रता के नाम पर

हमने अपने अन्दर विनाश के सभी जीवाणु एकत्र कर लिए हैं। यह ऐसी अन्तर्रचित प्रक्रिया है कि हमें इस बात का पता भी नहीं चलता कि आक्रमण होने वाला है तथा आक्रमणकारी तत्व मौजूद हैं। हम अपने आप से, अपने बनावटी जीवन से, अपने शिष्टाचारों तथा सतही व्यवहार विधियों से पूरी तरह सन्तुष्ट हैं!

अन्तर्जात रूप में हमारे अन्दर आत्मा का निवास है जो हमें ज्योतिर्मय करना चाहती है, और हमें शान्त अस्तित्व का आशीर्वाद और आनन्द प्रदान करना चाहती है। आपके इस सुन्दर चिराग का सृजन किसी उद्देश्य से किया गया है। इसे ज्योतिर्मय किया जाना है। अपना सम्मान करें। आज के शब्दकोश में 'सम्मान' शब्द बचा ही नहीं है। अपना सम्मान करें। हमें इस दीपक का, जिसमें आत्मा का प्रकाश है, सम्मान करना होगा और इसे ज्योतिर्मय करना होगा। हमें वह चिराग बनना चाहिए जो गरिमा को दर्शाता है। परमात्मा- सृजित यह विश्व बहुत सुन्दर है परन्तु अपनी अज्ञानता में, अपनी तथाकथित स्वतन्त्रता में, हमने बहुत सी चीज़ों को नष्ट कर दिया है।

ये देखकर दुख होता है कि लोग किधर जा रहे हैं- सीधे नर्क की ओर! एक माँ के लिए यह अत्यन्त चिन्ता का विषय है। इस पतन को किस प्रकार रोका जाए? उन्हें इससे बाहर कैसे निकाला जाए? किस प्रकार उन्हें समझाया जाए कि उनका महत्व क्या है, उनका मूल्य क्या है? आपको मानव जीवन को स्वीकृत नहीं मान लेना चाहिए। बहुत सी प्रक्रियाओं के बाद इस बहुमूल्य जीवन का सृजन किया गया। अत्यन्त कठिनाई से ये सृजन हुआ। मत भूलिए कि आपको 'आत्मा' बनना है, इसके बिना आपका जीवन व्यर्थ है (आत्मा बने बिना) क्योंकि आप सृजन की पराकाष्ठा हैं। आप ही उस सृजन का निष्कर्ष हैं।

और आप क्या करने चले हैं? हमें केन्द्रक (Nucleus) बनाने होंगे जो खुलकर परमात्मा के विषय में बात कर सकें। ये देखकर मैं हैरान थी कि इस देश में लोगों को परमात्मा के विषय में बात करना पसन्द नहीं हैं! क्या आप ऐसी अवस्था की कल्पना कर सकते हैं जहाँ आप अपने सृजनकर्त्ता के बारे में बात ही न कर सकें या जहाँ पर धर्म का कोई अर्थ ही न हो? या फिर आप किसी प्रकार की गुप्त संस्था बनाते हैं जिसमें सबको आने की आज्ञा न हो और कहते हैं, "अब हम फलाँ पंथ से सम्बन्धित हैं। परमात्मा के पंथ किस प्रकार हो सकते हैं? इस बारे में सोचिए, उनके अलग-अलग चर्च, अलग अलग मन्दिर और अलग-अलग मस्जिद किस प्रकार हो सकते हैं? परमात्मा के नाम पर हम धर्मान्ध कैसे हो सकते हैं? क्या आप इसकी कल्पना कर सकते हैं? हमने परमात्मा के साथ यही किया है। हम धर्मान्ध हो गए हैं। एक ऐसा पत्थर है जिसे जब वे (परमात्मा) छूते हैं तो यह सोना बन जाता है। किसी चीज़ को भी जब वे छूते हैं तो वह सोना बन जाती है। परन्तु पत्थर तो होना चाहिए। मानव को जब वे छूते हैं तो वे कैदियों की तरह से बन जाते हैं। इसी कारण से इतनी धर्मान्धता है। आपको ये समाचार, ये सन्देश देना ही एक समस्या है कि आप आत्मा हैं तथा आपको आत्मा बनना है।

मेरी मातृभाषा मराठी है और परमात्मा का धन्यवाद कि मैंने महाराष्ट्र में जन्म लिया। क्योंकि ये सन्तों का देश है। इस देश में हजारों सन्त हुए। ये परम्परावादी है, ये इतना आध्यात्मिक है। जिस स्थान पर मेरा जन्म हुआ, आध्यात्मिकता वहाँ की परम्परा है। महा-राष्ट्र अर्थात महान राष्ट्र। आध्यात्मिकता वहाँ की परम्परा है, मद्यपान, नशा सेवन या अन्य व्यसन नहीं। आध्यात्मिकता उस देश की परम्परा है जहाँ नामदेव नामक अत्यन्त सामान्य कवि का जन्म हुआ। वे दर्जी थे, मात्र एक साधारण दर्जी। परन्तु

उन्होंने बहुत सी मधुर कविताएं लिखीं। मैं वर्णन करुंगी कि उन्होंने क्या कहा:- ''एक नन्हां बालक आकाश में पतंग उड़ा रहा है। वह आकाश को देख रहा है, अपने मित्रों से बात कर रहा है, ऊपर नीचे हो रहा है, कभी-कभी बातें भी कर लेता है। परन्तु उसका चित्त सदा पतंग पर टिका हुआ है। तब वे कहते है कि अपने नन्हें शिशु को उठाए हुए एक महिला घर का कार्य कर रही है- पति को पानी दे रही है, बच्चे के साथ बैठी है, खाना बना रही है और बर्तन धोने के लिए खड़ी होती है। बच्चा उसने आराम से अपनी कमर पर उठाया हुआ है। सारे कार्य करते हुए भी उसका चित्त हर समय बच्चे पर टिका हुआ है। एक अन्य महिला सिर पर घड़े रखे हुए है, वह दूसरी महिलाओं के साथ चल रही है। मिलकर चलते हुए वो हँस रही हैं, मुस्करा रही हैं और एक दूसरे से ठिठोली कर रही हैं। परन्तु उनका चित्त हमेशा पानी से भरे घड़ों पर टिका है। अर्थात उनका चित्त 'आत्मा' पर है।

इसी प्रकार से यद्यपि हम यहाँ जीवन के कार्यों में लगे हुए हैं परन्तु खेद की बात है कि हमारा चित्त अपनी आत्मा पर नहीं है जो जीवन का अन्तिम लक्ष्य प्रदान करती है। ज्योंही आप आध्यात्मिकता की बात करने लगते हैं तो लोग सोचते हैं कि ये बेकार की बातें नहीं सुननी चाहिएं। बार-बार वे उन्हीं सांसारिक चीज़ों के विषय में सुनना चाहते हैं। Conservative या Labour पार्टी की कोई आकाशवाणी यदि हो तो वो इसे घण्टों तक सुनेंगे- ऐसी व्यर्थ की सांसारिक चीज़ों को। हर साल आप इसे सुनते हैं। परन्तु यदि कोई कहे कि ''नहीं, ये सब बनावटी है, आपके सुनने के लिए आपके अन्दर कुछ और भी बहुमूल्य है, ''तब लोग सोचते हैं, कि वो यहाँ ये सब बातें सुनने के लिए नहीं आए। ''माँ हमें ये सब क्या बता रही हैं?'' परन्तु अब जागो और खड़े हो जाओ। एक अलग स्तर पर हमें समझना है कि अब तक इन लोगों ने क्या किया है जिसे हमने स्वीकार कर लिया है। ये सब क्षितिज से परे हैं। हमारे अन्दर एक सितारा चमक रहा है और यह हमारी आत्मा है।

लोग इसके विषय में बात करते हैं, परमात्मा के विषय में बात करते हैं, ऐसे पंथ बनाते हैं जो कहते हैं कि वे परमात्मा का कार्य कर रहे हैं। परमात्मा के कार्य में महिलाएं अपनी जंघाओं को बाँध रही हैं और अपनी चमड़ी को चमका रही हैं! कल्पना करें, परमात्मा के नाम पर ऐसे भयानक कार्य हो रहे हैं! तर्क ये दिया जाता है कि ''आपको अपने को तपाना होगा।'' अपना दमन क्यों करना चाहिए? ''क्योंकि ईसामसीह ने ऐसा किया था।'' क्या आप ईसामसीह हैं? और इसका अर्थ ये हुआ कि ईसामसीह का कियाधरा सब व्यर्थ था और अब आपके योगदान की आवश्यकता है। जो भी कुछ किया गया वह पर्याप्त था क्योंकि ईसामसीह तो राजकुमार थे और यदि राजकुमार को कष्ट झेलने पड़े तो इसमें कौन सी महान बात है? ये कार्य वो पहले ही कर चुके हैं और उन्होंने हमारे लिए कार्य किया है। हमें अपने अन्दर उन्हें जागृत करना होगा और इस प्रकार से आत्मसाक्षात्कार पाना होगा।

सर्वसुगम विधि ये है कि बैठकर प्रश्न पूछें, परन्तु आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर लेना सर्वोत्तम है। आज यही सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। नि:सन्देह, आज की परिस्थितियों में मानव जैसा है, ये कार्य बहुत जल्दी से कार्यान्वित नहीं होगा। इस बात का मुझे विश्वास है। अपने स्तर पर मैंने पूरी कोशिश की। पहाड़ जैसी कुण्डलिनी आपको उठानी होती है। वास्तव में यह पहाड़ उठाने जैसा कार्य है। इतनी अधिक थकान होती है। परन्तु कोई इसके महत्व को नहीं समझना चाहता। अत: निराश न हों, इस विषय में दुखी न हों।

धीरे-धीरे निरन्तर, मुझे विश्वास है, आपकी

आँखों में झाँककर लोग देखेंगे कि आपका जीवन आनन्द, आशीष और सूझ-बूझ में परिवर्तित हो गया है। वो देखेंगे कि आप कितने प्रेममय और प्रसन्नचित्त हो गए हैं! और तब उन्हें विश्वास होगा कि उनके लिए एक बेहतर जीवन है। कुछ लोगों की स्थिति इतनी खराब होती है कि वे हर चीज़ में बुराई ही देखते हैं। वे इतने निराश हो चुके हैं कि उन्होंने सभी कुछ छोड़ दिया है। सब कुछ छोड़ दिया है। कहते हैं, ''अब हम ये सब छोड़ चुके हैं। हम सब कुछ कर चुके हैं, कुछ और नहीं करना चाहते।'' फ्राँस में मैंने ये देखा है। वे लोग विश्व के पतन और सिर पर लटकते हुए विश्व के विनाश की ही बात करते हैं। वे बहस करते हैं कि अब हमें समाप्त हो जाना चाहिए। ये सब हम काफ़ी देख चुके। किसी भी प्रकार से, एटम बम या किसी अन्य प्रकार से अन्ततः अब हमें नष्ट हो जाना चाहिए। अब हमें समाप्त हो जाना चाहिए। इतना अधिक उन्माद है। इन चीज़ों के विषय में सोचने वालों, जो लोग इसके विषय में चिन्तित हैं उनके उन्माद को मैं समझ सकती हूँ। मुझे इसकी चिन्ता है। मुझे कोई सन्देह नहीं कि व्यक्ति को उन्माद हो ही जाना चाहिए। कभी-कभी तो सहजयोगी भी अत्यन्त परेशान हो जाते हैं और उन्माद में आकर कहते हैं, ''श्रीमाताजी ये सब छोड़ दीजिए, हम ये सब कर चुके, अब और नहीं।'' परन्तु मैं नहीं जानती किस प्रकार अपना चित्त आत्मा से हटाऊं। आप यदि प्रयत्न कर सकते हैं, तो अपने स्तर पर इसे हटाने का भरसक प्रयत्न करें। आप ऐसा नहीं कर सकते क्योंकि आप इसमें हैं। अतः जो कुछ भी हो, आप अधिक से अधिक लोगों को बचाने के लिए लड़ते रहेंगे। **अतः कुछ-कुछ समय के बाद निराश होने वाले इन सभी सहजयोगियों को मुझे कहना है कि आपको निराश नहीं होना। आपको यदि दूसरों से हमदर्दी है, उनकी यदि आपको चिन्ता है तो आपको अपना साहस और सूझ-बूझ बनाए रखना होगा।** वे आपको समझेंगे और आप, केवल आप, अधिक से अधिक लोगों को बचा पाएंगे और उनका उद्धार कर पाएंगे तथा वे परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश करेंगे।

एकमात्र बाधा ये है कि आपको लगेगा कि अब भी बहुत से लोग खो गए हैं। कोई बात नहीं आपको कठोर परिश्रम करना होगा, हमें समझना होगा कि अब भी ऐसी नकारात्मक शक्तियाँ हैं जो उन्हें नीचे की ओर घसीट रही हैं। वे अज्ञानी हैं जो ये नहीं जानते कि इस सांसारिक खींचातानी के जीवन से परे भी कोई जीवन है- सौन्दर्य और गरिमा से परिपूर्ण शाश्वत जीवन। परन्तु शनैः शनैः मुझे विश्वास है, यह कार्यान्वित होगा। विशेषरूप से इस सभा के लिए। उन्होंने बहुत से उतार-चढ़ाव देखे और सभी हतोत्साहित हो गये।

परन्तु अब भी व्यक्ति को समझना होगा कि परमात्मा के कार्य परमात्मा से ही आशीर्वादित होते हैं। अपने सारे आशीर्वादों और सहायता की कृपावर्षा वे आप पर करेंगे ताकि आप मनचाहे कर्तव्यों को पूर्ण कर सकें। समय बीत रहा है, अब बहुत कम समय बचा है। समय तेज़ी से बीत रहा है। इसीलिए उन्माद बढ़ता जा रहा है। यह उन्माद पृथ्वी पर सहजयोग के आगमन का कारण बना है। अपने आस-पास विद्यमान बाधाओं से लड़ने के लिए आपको स्वयं को अधिक सुदृढ़ महसूस करना होगा और सृजन के इस अन्तिम लक्ष्य को कार्यान्वित करना होगा।

परमात्मा आप पर कृपा करें।

(निर्मला योग-1983)

रूपान्तरित

सहजी माताओं को श्री माताजी का परामर्श

''माँ बनना- सर्वोच्च जिम्मेदारी का पद है। माँ का पद, यह किसी राजा की जिम्मेदारी से भी बड़ी जिम्मेदारी का पद है- माँ बनना।'' (श्री माताजी)

किसी साक्षात्कारी की माँ बनने ने हमारे सम्मुख बहुत से व्यवहारिक प्रश्न खड़े कर दिए हैं जो सम्भवत: सहजयोग से पूर्व कभी हमारे सम्मुख न आते। लन्दन की सहजयोगिनियों को परम पूज्य श्री माताजी का परामर्श प्राप्त करने का विशेष आशीष प्राप्त हुआ। ये जानकर कि इस मार्ग दर्शन की विधियों को जानने की कितनी प्यास हमारे अन्दर थी, हमने श्री माताजी के भिन्न लोगों को बताए गए कुछ परामर्शों को एकत्र किया है। जहाँ तक हम जानते हैं ये पथ प्रदर्शन किसी व्यक्ति विशेष के लिए न होकर सभी सहजयोगियों के लिए है। आशा है आपके लिए भी यह हितकर साबित होगा।

सहजयोगिनी माताओं से बातचीत करते हुए श्री माताजी ने हमें बताया कि पाश्चात्य समाज में बच्चे हमारे अहं और प्रतिअहं के साथ जन्म लेते हैं- यही कारण है कि जन्म के समय उनके सिर पर या तो बहुत कम बाल होते हैं या बिल्कुल नहीं होते। भारत में, श्री माताजी ने बताया, जन्म के समय अवश्य बच्चों के सिर पर बाल होते हैं। एक बार जब बच्चे की जरूरतें पूरी कर दी जाएं अर्थात उसकी नैपी बदल दी जाए, दूध पिला दिया जाए तो उसके बाद उसे हर समय उठाए नहीं रखना चाहिए क्योंकि इस प्रकार उसके अहं को बढ़ावा मिलता है।

दृढ़तापूर्वक श्री माताजी ने हमें बताया कि आरम्भ से ही बच्चों को नियमित रूप से दूध देना है और उनके लिए एक लचीली दिनचर्या बनानी है। इस बात पर बल दिया गया कि एक विवेक पूर्ण सीमा तक बच्चों को हमारी जीवन शैली के अनुकूल होना चाहिए और उन्हें हम पर शासन नहीं करना चाहिए। श्री माताजी ने ये भी व्याख्या की कि परमात्मा अत्यन्त हानिकारक लहरियों से तो बच्चों की रक्षा कर सकते हैं परन्तु माँ बाप की लहरियों के प्रभाव से उन्हें नहीं बचा सकते। अत: ये आवश्यक है कि माता-पिता, जहाँ तक सम्भव हो, स्वयं को स्वच्छ करें। हमारा व्यवहारिक अनुभव भी यही है कि नन्हें शिशुओं और बच्चों को होने वाली चैतन्य-लहरियों की समस्याएं माता-पिता से ही आती हैं।

''यह अत्यन्त विशिष्ट जिम्मेदारी है, बच्चों के पालन-पोषण के लिए (That of having children)''।

विवेकशील माता-पिता न होने की स्थिति में श्री माताजी ने माँ और बच्चे की देखरेख विषय पर उपलब्ध पुस्तकें भी पढ़ने की सलाह माताओं को दी। उन्होंने कहा, कि पाश्चात्य समाज में वैसे माता-पिताओं का अभाव है जैसे भारत में हैं, वहाँ तो दादी माँ भी बच्चे के लालन-पालन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारत में तो पूरा समाज ही बच्चे को उचित दिशा में परिवर्तित करके ठीक प्रकार से प्रशिक्षित करने में योगदान देता है।

व्यवहारिक परामर्श : गर्भावस्था के समय माँ के मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य को स्वच्छ एवं सकारात्मकता से परिपूर्ण रखा जाना आवश्यक है।

''मस्तिष्क में जो चल रहा है उसका प्रभाव बच्चे पर भी पड़ेगा- मन प्रसन्न होना चाहिए- बनावट या भावना के साथ आप नहीं रह सकते।''

शारीरिक स्तर पर माँ यदि स्वस्थ है और गर्भ सामान्य है तो-गर्भावस्था के पूरे समय श्री माताजी ने सैर करने का परामर्श दिया। उन्होंने बताया कि इस प्रकार सैर करते रहने से प्रसव पीड़ा कम होगी (कहने का अभिप्राय ये भी था कि

स्वाधिष्ठान चक्र यदि ठीक होगा तो इससे सहायता मिलेगी।

जन्म के पश्चात : माँ और बच्चे को चालीस दिनों तक अन्दर रहना चाहिए। इस समय में उन लोगों से मिलना जुलना कम से कम होना चाहिए जो सहजयोगी नहीं हैं।

जन्म के पश्चात् से ही बच्चे को चीनी और उबला पानी दिया जा सकता है।

उदरशूल (पेटदर्द) उपचार : ऐसा लगता है कि हमारे बहुत से बच्चों को वायु और उदरशूल की समस्याएं भुगतनी पड़ीं। श्री माताजी ने इस विषय पर बहुत सारे परामर्श दिए कि किस प्रकार इस समस्या का उपचार किया जाए और रोका जाए:-

(a) **अजवायन उपचार :** निम्नलिखित विधि से अजवायन का सेक करें।

1. अजवायन को स्वयं चबा कर
2. किसी सूखे बर्तन में इसे आँच पर गरम करके, किसी कपड़े या रुमाल में डालकर बच्चे की नाभि पर सेक करें।

(b) माँ को भी प्रतिदिन ठीक ठाक मात्रा में अजवायन चबानी चाहिए, अजवायन लेने का एक अन्य तरीका भी श्रीमाताजी ने हमें बताया कि किस प्रकार इसका पेय बनाया जा सकता है:-

सौंफ के सात दाने और अजवायन के दो दाने और मिशरी मिलाकर पानी को उबालें और बच्चे के पीने के लिए बनाएं। बढ़ी हुई मात्रा में सौंफ और अजवायन डाल कर भी, माँ और बच्चा यदि इसका उपयोग करें तो भी लाभ हो सकता है।

(c) बच्चा जब बड़ा हो जाए-एक या दो महीने का तो ग्राइप वाटर भी दिन में दो बार दिया जा सकता है, परन्तु यह पहले उबाला जाना चाहिए।

(d) अन्य परहेज :-

1. बच्चे को ठीक प्रकार से वायुमुक्त किया जाना चाहिए चाहे वो सोया हुआ हो।
2. बच्चे को वायुमुक्त करते हुए हाथ नीचे की ओर चलने चाहिएं, गर्दन से रीढ़ के अन्त तक।

आपके बच्चे को यदि वायु की समस्या है और आप बच्चे को स्तनपान कराती हैं तो आपका अपना भोजन भी महत्वपूर्ण है। ऐसा भोजन करें जिससे वायु न बने।

a. चावल नहीं खाने चाहिएं।
b. पृथ्वी के अन्दर जड़ों में उत्पन्न होने वाली सब्जियाँ नहीं खानी चाहिएं।
c. मैदा या मैदे से बनी चीज़ें नहीं खानी चाहिएं।
d. दूध में कोई अनाज आदि पकाकर पीना चाहिए, केवल दूध नहीं।
e. ठण्डे पेय से बचें।
f. सभी वायु उत्पन्न करने वाले पदार्थों से बचें, जैसे बीन्स और मसाले।

खाने के लिए अच्छा आहार निम्नलिखित है:-

सूजी, बादाम (चीनी मिलाकर या सादे), भारतीय रसगुल्ला आदि।

स्नान : बच्चे को नहलाते हुए हमें चाहिए कि उन्हें गर्म रखें। सर्दियाँ यदि अधिक हैं तो बच्चे को रोज़ नहलाना आवश्यक नहीं है। श्री माताजी कहती हैं कि ऐसा करना आवश्यक नहीं है परन्तु प्रतिदिन तेल मालिश आवश्यक है।

बच्चे की प्रतिदिन तेलमालिश होनी चाहिए क्योंकि यह चक्रों के लिए अच्छी होती है। मालिश

के लिए जैतून, बादाम या सरसों का तेल उपयोग किया जाना चाहिए, बाजारी बेबी तेल नहीं क्योंकि इसमें विटामिनों का अभाव होता है। बालों में जैतून का तेल न लगाएं इससे बाल सफेद होते हैं। सहस्रार पर तेल की मालिश ऐसे की जानी चाहिए मानो सहस्रार को तेल से भरना हो।

बाजुओं से बच्चे को न उठाए इससे उसके कन्धों को हानि पहुँच सकती है, उसे बहुत तकलीफ भी पहुँच सकती है।

बालों में कंघी अवश्य की जानी चाहिए चाहे अधिक बाल न हों। सिर पर सामने से पीछे की ओर कंघी करें। पीछे से सहस्रार की ओर ऊपर तथा दोनों तरफ। ऐसा सहस्रार को खोलने के लिए किया जाता है तथा बालों को बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए।

वस्त्र : श्री माताजी ने स्पष्ट शब्दों में बताया कि बच्चों को 100% प्राकृतिक तन्तुओं से बने वस्त्र पहनाए जाने चाहिएं और चमड़ी के समीप के वस्त्र शुद्ध कपास के होने चाहिएं। ठण्डी जलवायु के इलाकों में या सर्दी के मौसम में सूती कपड़ों के ऊपर ऊनी कपड़े पहनाए जाने चाहिएं। ग्रीवा अस्थि का छोटा सा खाली स्थान ढका जाना आवश्यक है क्योंकि इससे बच्चे ठण्ड नहीं पकड़ते। केरुबीम (Sherub) की पोशाक सूती वस्त्रों पर पहनाई जानी लाभकारी है।

बच्चों के लिए रेशम के कपड़े ठीक नहीं हैं। नेपियाँ 100% सूती होनी चाहिएं क्योंकि उनका चैतन्य अच्छा होता है। परन्तु सेमिनार आदि के अवसर पर 'उपयोग करो और फेंकों' नेपियाँ ठीक हैं।

चैतन्य लहरियों के अच्छे प्रवाह के लिए दो भागों की पोशाकें अच्छी होती हैं। वस्त्र बच्चों के टखनों तक आने चाहिए। ठण्डे मौसम में ध्यान रखना आवश्यक है कि बच्चे की नाभि भली भाँति ढकी हुई है। लड़कियों को लड़कियों जैसी या पंजाबी सूट पहनाए जाने चाहिए और लड़कों को लड़कों जैसी वेशभूषाएं।

खिलौने : खिलौने भी प्राकृतिक तन्तुओं से बने होने चाहिए जैसे लकड़ी। प्लास्टिक के खिलौनों की चैतन्य-लहरियाँ अच्छी नहीं होतीं इसलिए इनसे बचना चाहिए। श्री माताजी ने बताया कि बच्चों के पास थोड़े से खिलौने होने चाहिएं परन्तु बहुत अच्छी गुणवत्ता के।

दूध छुड़ाई : बच्चों की दूध छुड़ाई छठे माह से शुरु होनी चाहिए और दसवें माह तक पूरी हो जानी चाहिए। बच्चों को दिए जाने वाले भोजन ताजा होने चाहिएं। डिब्बा बन्द बनावटी भोजन बच्चों को नहीं देने चाहिएं। श्री माताजी ने परामर्श दिया कि दूध छुड़ाई के लिए बच्चों को दिया जाने वाला पहला भोजन, चीनी मिश्रित दूध में मसले चावल (खीर) होना चाहिए। दही के साथ बच्चों का भोजन न आरम्भ करें। बच्चों के दूध पिलाने की बोतलें यदि शीशे की हों तो बेहतर है।

टीकाकरण : बाल रोगों से बचने के लिए श्री माताजी ने बच्चों को टीकाकरण का परामर्श दिया क्योंकि इससे बच्चों में नकारात्मकता का मुकाबला करने की शक्ति बढ़ती है।

ध्यानधारणा:- श्री माताजी ने बताया कि शैशवकाल से ही बच्चों को हमारे साथ प्रातः काल ध्यान करना चाहिए।

''हमें याद रखना है कि मातृत्व बहुत ही महत्वपूर्ण हैं- माँ ने इस ब्रह्माण्ड का सृजन किया है, पिता तो मात्र साक्षी थे।'' *श्रीमाताजी*

निर्मला योग-1983
(रूपान्तरित)

निर्मल नगरी–पुणे की पावन भूमि पर
श्री महालक्ष्मी का पुनर्आगमन – रविवार, 22 अक्तूबर - 2006

रविवार, 22 अक्तूबर 2006 का दिन मानव इतिहास में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। हजारों वर्षों के बाद एक बार फिर पुणे (भारत) के खाटपेवाड़ी गाँव, भूकुम में बनाई गई निर्मल नगरी की पावन भूमि पर परम–पूज्य श्रीमाताजी के रूप में श्री महालक्ष्मी के चरण–कमल पड़े।

हजारों वर्ष पूर्व त्रेतायुग में श्री विष्णु और श्री महालक्ष्मी के अवतरण श्री राम और सीताजी ने अपने चरण–कमलों से इस भूमि को चैतन्यित किया था। महाराष्ट्र ही केवल ऐसा प्रदेश था जहाँ श्री सीता–राम नंगे पाँव पैदल चले। मिथक इस प्रकार से है कि चौदह वर्षों के बनवास में श्री सीता–राम ने कुछ समय इस भूमि पर बिताया। खाटपेवाड़ी के ग्रामीण इस बात का दावा करते हैं कि जो बर्तन श्रीराम और सीता ने उस समय उपयोग किए थे उनके अवशेष साथ वाली पहाड़ी पर मौजूद हैं और उनके उस स्थान पर आने का प्रमाण हैं। इस भूमि पर प्रवाहित होने वाला चैतन्य भी इसके महत्व को बताता है। इसी पावन भूमि के लगभग ग्यारह एकड़ क्षेत्र में निर्मल नगरी बनाई गई है। श्री राम के अवतरण के बारे में बताते हुए एक बार श्रीमाताजी ने बताया था कि इस भूमि को चैतन्यित करने के लिए श्रीराम वहाँ पर नंगे पाँव चले और पृथ्वी तत्व के रूप में वहाँ श्री गणेश अपनी अभिव्यक्ति करते हैं।

"क्योंकि पहली बार जब मानव पृथ्वी पर आया तो वह सभी पशुओं और भयानक राक्षसों से भयभीत था। ऐसी स्थिति में मनुष्य को एक राजा, एक शासक की आवश्यकता थी जो आदर्श राजा हो और धर्म–पूर्वक शासन करे। श्री राम उन्हीं शासकों में से एक थे। वे त्रेता युग में अवतरित हुए और श्री कृष्ण द्वापर युग में।

मैं जब अवतरित हुई तो कलियुग था परन्तु आज कृतयुग का समय है–ऐसा युग जिसमें कार्य होगा–कृतयुग। यह वह समय है जब कार्य होगा।" *("परम पूज्य श्री माताजी चैलशम रोड लन्दन 2 अप्रैल 1982")।*

दिवाली के त्यौहार का सूक्ष्म महत्व यह भी है कि यह श्री राम की रावण पर विजय और उनकी अयोध्या वापिसी से सम्बन्धित है। उनके आगमन की खुशी में प्रकाश उत्सव मनाया गया था। आसुरी शक्तियों पर अच्छाई की विजय का आनन्द लेने के लिए हर व्यक्ति प्रेमदीप जलाना चाहता है ताकि उनके अन्दर राजलक्ष्मी तत्व ज्योतिर्मय हो सके। श्रीमाताजी कहती हैं :–

"आपकी आत्मा के लिए जो कुछ भी अच्छा है, यह संयोजन होते ही वह स्वतः कार्यान्वित हो जाएगा, आज सहजयोग का यही कार्य है। इसीलिए मैंने कहा कि यह कृतयुग है और इसमें यह कार्य होना है। यह समन्वय हमें अपने अन्दर प्राप्त करना है, अतः कई बार आपको अपने शरीर उस स्तर के बनाने पड़ते हैं।"

("परम पूज्य श्री माताजी चैलशम रोड, लन्दन 2 अप्रैल 1982")

दिवाली पूजा का उत्सव मनाने के लिए आत्म–साक्षात्कारियों की सामूहिकता के रूप में विद्यमान यहाँ उपस्थित हम सब सहजयोगी कितने भाग्यशाली हैं! और इसी पावन भूमि पर दिसम्बर 2006 में हमें ईसा–मसीह के जन्म दिवस का उत्सव मनाने का भी सौभाग्य प्राप्त होगा!

सारी भाग–दौड़ और दिन की तपन के बावजूद भी ये दिवस अत्यन्त आनन्ददायी था। शाम के समय थोड़ी सी ठण्ड हो गई थी और आकाश में छिट–पुट बादल भी दिखाई दे रहे थे। आज निर्मल नगरी बिल्कुल भिन्न नज़र आ रही थी। सर्वत्र आनन्द एवं उल्लहास का वातावरण था और सभी हृदय इसका पूर्ण आनन्द उठाना चाहते थे।

दिवाली से पूर्व के दिनों में इन्टरनैट से प्राप्त हुई सूचनाओं से सभी योगियों के हृदय प्रफुल्लित थे क्योंकि हमें पता चला था कि श्रीमाताजी का स्वास्थ्य बहुत अच्छा है, वे बहुत प्रसन्न हैं। इग्लैण्ड में वे खरीददारी के लिए भी गईं और एक शाम सहजयोगियों के साथ उन्होंने अपने ही लिखे हुए भजन का एक पूरा अन्तरा गाया–'माँ तेरी जय हो, तेरी ही विजय हो'। पूजा का समय शाम को साढ़े पाँच बजे घोषित किया गया था और अब सभी आँखें दिवाली पूजा में उनके पावन दर्शन करने की प्रतीक्षा कर रहीं थी। विश्व भर के देशों से महालक्ष्मी रूप में परम पूज्य श्रीमाताजी के चरण कमलों की पूजा करने के लिए निर्मल नगरी में एकत्र हुए तेरह–पन्द्रह हजार सहजयोगियों का उल्लास देखते ही बनता था!

आम सोच तथा पूर्वानुभवों के अनुसार अधिकतर लोगों ने यही सोचा कि पूजा के लिए घोषित समय, वास्तव में श्रीमाताजी के पहुँचने से बहुत अधिक पहले होता है। यद्यपि पूजा का समय साढ़े पाँच बजे शाम घोषित किया गया था फिर भी पाँच बजे तक पूरी सामूहिकता ने इसे गम्भीरता से नहीं लिया था। वे नहीं जानते थे कि दिव्य–लीला क्या है। पूजा स्वीकार करने के लिए श्रीमाताजी समय से पूर्व ही तैयार हो गईं थीं। क्या ये चैतन्यित–भूमि परम पावनी माँ का स्वागत करने के लिए बेचैन थी या पूजा स्वीकार करने के लिए स्वयं महालक्ष्मी की एक बार फिर वहाँ जाने की इच्छा भी? या श्रीमाताजी श्री गणेश की इस इच्छा को नकार नहीं पाईं कि वे समय से पूर्व पहुँचकर अपने दर्शन दें? अतः श्रीमाताजी ने पूजा के घोषित समय से बहुत पहले प्रतिष्ठान से रवाना होने का फैसला किया।

अचानक कारों का एक काफ़िला श्री माताजी की कार के पीछे–पीछे आता हुआ, पौने पाँच बजे निर्मल नगरी के द्वार के समीप दिखाई दिया। मार्गदर्शक कार (Pilot Car) श्रीमाताजी की गाड़ी के आगे आगे चल रही थी। इतने थोड़े समय में परम पावनी माँ का स्वागत करने के लिए स्थान ग्रहण करने को भागते हुए सहजयोगियों को देखना वास्तव में एक दृश्य था। मानो सभी हृदय उनकी स्तुति गान कर रहे हों, "शुभ–मंगलमय दिवस है आया.....आदि शक्ति हैं स्वयं पधारीं।"

कुछ समय के लिए पूर्ण शान्ति छा गई। श्रीमाताजी, विशेष रूप से उनके लिए सजाए गए मंच के साथ के कमरे में आ गईं थीं। चैतन्य प्रवाह बता रहा था कि परम पावनी माँ वहाँ विराजमान हैं। और फिर अचानक "स्वागत आगत स्वागतम" की धुन लहरा उठी। पौने छः बज चुके थे परन्तु मंच के पर्दे अभी तक गिरे हुए थे। पर्दे जब हटे तो मंच पर स्वर्गीय दृश्य था। सभी लोग वहाँ लगे चार विशाल स्क्रीनों पर मद्धम नज़र आने वाली तस्वीरों को देख रहे थे, क्योंकि अभी तक पर्याप्त अन्धेरा नहीं हुआ था। तभी श्री आदि–शक्ति माताजी श्री निर्मला देवी का जयकारा गूंज उठा और उसके पश्चात् सर सी.पी., प्रिय पापाजी का जय घोष हुआ। तत्पश्चात् सर सी.पी. ने माइक पर विश्व सामूहिकता के सम्मुख, अपनी विशेष शैली में, हिन्दी भाषा में परम पावनी माँ का पावन सन्देश सुनाया।

"उन्होंने कहा–"श्रीमाताजी ने आप सबके लिए सन्देश दिया है...हम सब एक हैं, परमात्मा केवल एक है, कहने के लिए अब कुछ नहीं बचा है। इस लक्ष्य के लिए और मानव मात्र के हित के लिए उन्होंने पिछले पैंतीस वर्षों में विश्व भर में अथक प्रयास किए हैं और यात्राएं की हैं। अब हमें भूल जाना चाहिए कि हम भिन्न हैं। हम सब एक हैं और उनके स्वप्न को साकार करने की तथा पूरे देश में उनके सन्देश को फैलाने की जिम्मेदारी हमें अपने कन्धों पर ले लेनी चाहिए।"

श्रीमाताजी गहनता पूर्वक सामूहिकता को देख रही थीं और कभी–कभी वे अत्यन्त स्नेहपूर्वक हमारे

प्रिय पापाजी को देख लेतीं, मानों स्वीकृति में सिर हिला रहीं हों। उनकी सुन्दर मुखाकृति हमें प्रसिद्ध भजन की याद दिला रही थी, 'प्यार भरे ये दो निर्मल नैन।' मानो उनके पावन दर्शनों के आशीर्वाद से हमारे हृदय पिघल रहे हों! निःसन्देह यही वह क्षण था जिसकी हज़ारों साधकों को प्रतीक्षा थी।

सवा छः बजे बच्चों–नन्हे गणेशों–को परम पूज्य श्रीमाताजी के चरण कमलों की पूजा फूलों से करने के लिए मंच की ओर दौड़ते हुए देखा गया। 'श्री गणेश अथर्वशीर्षम्' पढ़ा जा रहा था, तत्पश्चात् 'विनती सुनिए आदिशक्ति' और फिर श्रीमाताजी के 108 नामों वाला भजन 'जागो सवेरा' गाया गया। इसके बाद सात विवाहित महिलाओं ने श्री महालक्ष्मी के शृंगार के लिए उनके सम्मुख पर्दा पकड़ा और महामाया महाकाली, तुझ्या पूजनी तथा महालक्ष्मी स्तोत्रम गाए गए।

ठीक सात बजे आरती और तीन महामन्त्रों के साथ श्री महालक्ष्मी रूप में श्रीमाताजी के चरण कमलों में दिवाली पूजा का समापन हुआ।

हे परम पावनी माँ केवल आपकी कृपा से ही आज हम यहाँ उपस्थित हो पाए। विश्व भर के सहजयोगी भाई–बहनों की ओर से हम सब प्रार्थना करते हैं कि आपके चरण कमलों में हमारे कोटि–कोटि प्रणाम स्वीकार हों। पूजा को स्वीकार करने के लिए पूर्ण समर्पित हृदय से हम आपके प्रति आभारी हैं। तत्पश्चात् अद्‌भुत रंग–बिरंगी आतिशबाजी का प्रदर्शन हुआ जिसने निर्मल नगरी के पूरे आकाश को आच्छादित कर दिया। उल्लसित नन्हें गणेश (बच्चे) इधर–उधर उछलते हुए दिखाई दिए और स्वयं श्रीमाताजी भी अत्यन्त प्रसन्नता एवं प्रेम पूर्वक आकाश की ओर देखती हुई दिखाई दीं। मानो अपने बच्चों के प्रेम–प्रदर्शन को कबूल रही हों! चैतन्य–लहरियों का प्रवाह आश्चर्यजनक था!

आकाश में अभी आतिशबाजी चल ही रही थी कि मेज़बान देशों के प्रतिनिधियों, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय ने श्रीमाताजी को उपहार देने के लिए लाइन लगा ली। भारत, फ्रांस, आस्ट्रेलिया, स्विटज़रलैण्ड, पुर्तगाल, इटली, बहरीन, हाँग–काँग, आस्ट्रिया, मालता आयर लैण्ड, बल्गारिया, रूस, यूनान, अर्जेन्टीना, रोमानिया, अमेरिका तथा अन्य बहुत से देशों ने अपने उपहार अर्पण किए। छिन्दवाड़ा योजना के विकास के लिए भिन्न देशों द्वारा उदारता–पूर्वक दी गई धनराशियाँ महालक्ष्मी तत्व की अभिव्यक्ति कर रहीं थी। उपहार अर्पण समारोह की समाप्ति पर घोषणा की गई कि चौबीस, पच्चीस और छब्बीस दिसम्बर 2006 को निर्मल नगरी पुणे में अन्तर्राष्ट्रीय ईसामसीह जन्म दिवस पूजा का आयोजन किया जाएगा। तालियाँ बजाकर योगियों ने इस घोषणा का स्वागत किया। लगभग साढ़े सात या पौने आठ बजे मंच के पर्दे गिरा दिए गए और सारी सामूहिकता अपने हाथ फैलाकर खड़ी हो गई। तेज़ हवा का एक झोंका आया और उसी के साथ सामूहिकता पर बारिश की कुछ बूँदें गिरीं।

ऐसा प्रतीत हुआ मानो वरुण देवता और सभी गण इस पावन भूमि पर श्रीमहालक्ष्मी की पूजा से प्रसन्न होकर हल्की–हल्की बूँदों से अपने आनन्द की अभिव्यक्ति किए बिना न रह सके हों! नन्हीं–नन्हीं बूँदें शनैःशनैः बड़ी बूँदों में परिवर्तित हो गईं और श्रीमाताजी के जाने के बाद आधे घण्टे तक बरसती रहीं। बारिश की बूँदों से पावन मिट्टी की सुगन्ध सर्वत्र फैल गई। परन्तु बूँदें इतनी बड़ी भी न थीं कि योगीगण भीग सकें। वातावरण अत्यन्त आनन्दमय हो गया था। लगभग साढ़े आठ हजार योगियों ने बाकी की शाम चैतन्य का आनन्द उठाया और लगभग पाँच से छः हजार लोग पूजा स्थान से श्री महालक्ष्मी पूजा में चैतन्य स्नान करके अपने घरों को लौट गए।

–जय श्रीमाताजी

रबि घोष (भारत)

(इन्टरनैट विवरण) रूपान्तरित

अतिविशिष्ट व्यक्ति सम्मेलन

(न्यूयार्क, यू. एस. ए. – 16-6-1999)

परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी से पूछे गए प्रश्न और उनके उत्तर

प्रश्न :– आज सन्ध्या को किए गए ध्यान से क्या कोई रोग निवारक शक्ति आएगी?

श्रीमाताजी :– हाँ, सर्वप्रथम हमें ये समझना है कि ये शक्ति है क्या। ये बात अवश्य समझनी है। यह शक्ति रोग निवारण करती है, इसमें कोई सन्देह नहीं। पहले ये आपके रोग निवारण करेगी और फिर अन्य लोगों के, इस बात में कोई सन्देह नहीं है।

*प्रश्न:– **सहजयोग और रेकी में क्या सम्बन्ध है?** क्या ये एक दूसरे के समानान्तर हैं?*

श्रीमाताजी:– मैं किसी चीज़ की आलोचना नहीं करना चाहती, आपको केवल ये देखना चाहिए कि किसी चीज़ से आपको क्या लाभ प्राप्त हुआ.... पहला प्रश्न ये कि किसी कार्य को करने से आपको क्या लाभ हुआ? क्या आपको परमेश्वरी ज्ञान प्राप्त हुआ? क्या आपको आदिशक्ति (Holy Ghost) की शीतल लहरियाँ प्राप्त हुईं? एक माँ के नाते मैं पूछती हूँ कि इससे आपको क्या प्राप्त हुआ? बाजार में बहुत लोग हैं, बहुत से। मैं आपसे यही प्रश्न पूछूंगी कि बच्चे आपको क्या मिला? इन चीजों का कोई अन्त नहीं है।

प्रश्न :– जो कुण्डलिनीयोग आप सिखाती हैं क्या उसका सम्बन्ध तन्त्रयोग से है?

श्रीमाताजी :– देखिए, कुण्डलिनीयोग मात्र एक नाम है परन्तु आपको ये बताना आवश्यक है कि इसका कुण्डलिनी से कोई लेना देना नहीं है। अतः यदि आप शब्दों के अर्थ को देखेंगे तो 'सहजयोग' और 'कुण्डलिनीयोग' एक से प्रतीत होंगे। परन्तु वास्तव में मैंने देखा है कि 'कुण्डलिनीयोग' अत्यन्त भयानक कार्य है। क्योंकि इसके कारण लोगों ने बहुत कष्ट उठाए हैं। अतः यह बिल्कुल भिन्न है। मैं नहीं जानती कि कुण्डलिनीयोग के नाम पर वो लोग क्या करते हैं।

प्रश्न:– क्या आप जानती हैं कि कुण्डलिनी वही जीवन दायिनी (Life Force) ऊर्जा है जिसे चीन के लोगों ने 'ची' (Chi) कहा, तथा यह ऊर्जा हमारा एक भाग है, पूरे विश्व का एक हिस्सा है जिस तक हम इस प्रकार पहुँच सकते हैं, और ची–गोंग (Chi-Gong) और ताय–ची (Tai-Chi) के माध्यम से भी। क्या यह वही शक्ति है?

श्रीमाताजी:– हाँ, हाँ ये सत्य है। परन्तु आप देखिए कि इसका सम्बन्ध हमारे अहं और प्रतिअहं से है। चीन के लोगों ने जो लिखा वह ठीक है। परन्तु चीन के लोग भी ये नहीं जानते कि लाओत्से कौन हैं, क्या आप इस बात की कल्पना कर सकते हैं? लाओत्से वह व्यक्ति थे जिन्होंने इस शक्ति के विषय में बताया। उन्होंने उन लोगों को कुण्डलिनी के विषय में बताया और वो ये भी नहीं जानते हैं कि लाओत्से कौन हैं!

अमरीका में, विशेष रूप से, मैं नहीं समझ सकती कि किस प्रकार के चीनी लोग यहाँ रहते हैं। यह ज्ञान का महान स्रोत है और उन्होंने (लाओत्से) जो भी कहा वह बिल्कुल ठीक है। परन्तु सहजयोग में हर चीज़ का समन्वय है। सारे ज्ञान, सभी धर्म ग्रन्थ, सभी कुछ इसमें समन्वित हो जाता है। पूर्णतः समन्वित हो जाता है क्योंकि इसके प्रकाश में आप सभी के सत्य को देख सकते हैं। हर चीज में सत्य है, हर धर्म में सत्य निहित है.... ।

(इन्टरनैट विवरण)

रूपान्तरित

"निःसन्देह सहजयोग बढ़ेगा, पर इसे आयोजित मत कीजिए। आयोजन शुरु करते ही बढ़ोतरी रूक जाएगी। जैसे, आपने देखा होगा, काटकर सुव्यवस्थित (आयोजित) करने से पेड़ बौना हो जाता है। मैंने ऐसा कोई वृक्ष नहीं देखा जो आयोजन से बढ़ता हो। ज्यादा से ज्यादा आप इसका पोषण कर सकते हैं, पानी दे सकते हैं, पर आप इसके विकास की गति नहीं बढ़ा सकते।"

- परम पूज्य श्री माताजी